An International,
Registered & Referred
Monthly Journal :
Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 58-60
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

नागार्जुन के काव्य में व्यंग्य : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में नागार्जुन के काव्य में व्यंग्य अभिव्यक्ति को लेकर विचार किया गया है। नागार्जुन प्रगतिवादी परम्परा के शीर्ष कवियों में अपना स्थान रखते हैं। नागार्जुन हिन्दी कविता में एक व्यंग्यकार के रुप में, विशेष रुप से जाने जाते हैं। शिवकुमार मिश्रा के अनुसार - ''सामाजिक व्यंग्य की जो परम्परा भारतेन्दु युग के बाद अवरुछ हुई सी जान पड़ती थी, कविता के प्रगतिशील यथार्थवादी युग में आकर नागार्जुन द्वारा वह फिर से जीवंत हुई नागार्जुन की कविता का स्थाई भाव 'प्रतिहिंसा' है। नागार्जुन की यह वर्ग-प्रति हिंसा कविता में व्यंग्यों के रुप में प्रस्तुत हुई है।

डॉ.सुनिता यादव

नागार्जुन इनका पूरा नाम वैद्यनाथ मिश्र हैं। मिथिला के तरौनी नामक ग्राम के साधारण परिवार में आपका जन्म सन् 1911 में हुआ था। आंरभिक शिक्षा प्राप्त करके नागार्जुन ने काशी कलकत्ता, और सेलानियों स्थानों में संस्कृति और पालि भाषाओं का अध्ययन किया, साहित्य तथा दर्शन की शिक्षा प्राप्त की, जीवन के प्रारंभिक काल से ही नागार्जुन को अनेक अन्धविश्वासों और रूढियों का सामना करना पड़ा संघर्ष की इस भूमिका में उनकी प्रगतिवादी विचार धारा परिपुष्ट हुई। 'यात्री' नाम उन्होंने स्वयं मैथिली रचनाओं के लिए चुना था। 1936 –37 में उन्होंने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली तभी उनका 'नागार्जुन' नामकरण हुआ 'नागार्जुन' 'यात्री' के अलावा 'बाबा' यायावर तथा 'नागाबाबा'नामों से भी साहित्य में जाने जाते है। ये सारे नाम उनके प्रतीक बन गए है और परोक्षतः ये नाम उनकी उस प्रकृति के सूचक हैं, जो उनके घुमक्कड़ और फक्कड़ाना व्यक्तित्व के साक्षी है।

नागार्जुन का कृतित्व बहुविध है उन्होने हिन्दी साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर लेखन किया है। और वह भी समानाधिकार से उनकी साहित्य यात्रा में काव्य, उपन्यास, कहानी, निबन्ध, जीवनी, अनुवाद इत्यादि समाविष्ट है। इसके अतिरिक्त संस्कृत, मैथिली, बंगला, में भी साहित्य सृजन किया है। उनका बाल–साहित्य भी अत्यंत समृद्ध है नागार्जुन तरल आवेगों से युक्त हदृय धर्मो जनकवि है। उनकी रचना का परिप्रेक्ष्य व्यष्टि से वैश्विक है। उनके व्यक्तित्व एंव कृतित्व में घनिष्ठ संगति समाहित हैं जनसामान्य की जिन समस्याओं को कवि ने रेखांकित किया हैं, वे सभी उनके जीवनानुभवों एवं चिंतनात्मक दृष्टि पर आधारित है।

नागार्जुन के तीन काव्य संग्रह हैं 'युगधारा'(1956) 'संतरगें' पंखों "वाली" (1959) "प्यासी पथराई ऑखे" (1962) इत्यादि। नागार्जुन की कविता में सामाजिक वैषम्य को प्रखर वाणी दी है। उनका आक्रोश जनता के शोषको पर अधिक है और वे अपने लेखन से सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं व्यंग्य उनकी शैली का प्रधान अस्त्र है जिसके प्रहार से समाज तिलमिला उठता हैं । डॉ. त्रिलोचन पाण्डेय के अनुसार "वर्तमान समाज–पद्धति के प्रति विद्रोह करना कवि का प्रमुख कर्तव्य हैं। विदेशी शासन– प्रणाली पर तीक्ष्ण व्यंग्य करने में नागार्जुन सिद्ध हस्त हैं।''

नागार्जुन ने जहाँ एक और भारत के प्राकृतिक सौन्दर्य की चर्चा की, महापुरूषों के उच्च चरित्रों उनकी उत्कृष्ट साधनाओं को शब्द बद्ध किया हैं। वहीं दूसरी और समाज और राजनीति में व्याप्त विसंगतियों और विद्रूपताओं का भी चित्रण किया है। कवि की रचनाओं में उनका रचनात्मक पक्ष के साथ–साथ संहारात्मक पक्ष भी मिलता हैं। कवि अपने इस रूप में अत्यधिक व्यंग्यात्मक परिलक्षित होते है। नामवार सिंह के अनुसार "कबीर के बाद हिन्दी में नागार्जुन से बड़ा दूसरा व्यंग्यकार पैदा नही हुआ।..... शासक का कोई भी तबका इस व्यंग्य की धार से बचने नही पाया है। व्यंग्य के विषय ही विविध नहीं हैं। व्यंग्य के काव्य रूप भी विविध हैं।''

नागार्जुन की कविता का प्रधान स्वर व्यंग्य का है जिसके माध्यम से सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी सवालों पर बड़े ही तीखें और सटीक प्रहार किए हैं। जगदीश चतुर्वेदी के अनुसार "व्यंग्य की इस पद्धति को विशेष रूप से कविता के क्षेत्र में अपनाकर बाबा नागार्जुन ने अपने को 'कबीर'की उस ऐतिहासिक परंपरा के साथ जोड़ दिया है। जिसमें तमाम किस्म की प्रवृतियों का व्यंग्य के माध यम से विरोध किया गया है।''

नागार्जुन के काव्य में सामाजिक जीवन आर्थिक अभाव भारत की समृद्धि और उसका शोषण, पूजीवाद, अर्थव्यवस्था, सामाजिक, विंरूपताओं, राष्ट्रीय भावना, प्रकृति चित्रण, युगीन विषमता, शासक

अतिथि सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग), शासकीय महाविद्यालय, इछावर, जिला-सीहोर (मध्यप्रदेश)

वर्ग, जनतंत्र बुद्धि जीवियो पर व्यंग्य किये है। 'युगधारा' कवि का प्रथम काव्य संग्रह है। उनके इस काव्य संग्रह में प्रगतिवादी चेतना को आत्मसात् किये हुए है। इस काव्य संग्रह में व्यंग्य के माध्यम से अपने व्यक्तिगत जीवन से लेकर सामाजिक जीवन के आर्थिक अभाव,अज्ञान, मृत परम्परा का चित्रण कवि ने किया है। आर्थिक अभाव राष्ट्रीय जीवन को किस प्रकार आस्थाहीन, असामाजिक और वैयक्तिक बना रहे कवि लिखता है।

"मेरा क्षुद्र व्यक्तित्व/रूद्ध है/ सीमित/है आटा, दाल, नमक, लकड़ी के जुगाड़ में/ पत्नी और पुत्र में/ सेठ के हुकुम में/कलम ही मेरा हल है कुदाल हैं/बहुत बुरा हाल है/ करू में किस वर्ग में गिनती अपनी।"

'प्रेत का बयान' कविता व्यंग्य प्रधान कविताओं में प्रमुख स्थान रखती हैं । कविता में एक भूख से पलने वाले अध्यापक का बयान है– ***"ओ रे प्रेत/कड़क कर बोले नरक के मालिक यमराज/ सचसच बतला/कैसे मरा तू?/भूख से अकाल से?/ बुखार कालाबाजार से? पेचिश, बदहजमी,प्लेग, महामारी से।"***

'तर्पण' 'शपथ' कविता में व्यंग्य और भी तीक्ष्ण हैं वह सामाजिक विरूपताओं और विसंगतिओं की कटुता का अनुभव कराती है। जैसे – ***"जिस बर्बर ने/कल किया तुम्हारा खून पिता/वह नही मराठा हिन्दू हैं–वह प्रहरी हैं स्थिर स्वार्थो का/वह मानवता का महाशत्रु/हम समझ गए/जो कहते है उसको पागल/वह नही चाहते परम सुध्ध जनता घर से बाहर निकले/हो जाएँ ध्वस्त।"***

नागार्जुन की अधिकांश कविताए मध्य वर्ग के निचले अर्थात् मध्यवर्गीय जीवन को चित्रित करती है। जिनमें वे मामूली, उपेक्षित, असहाय जिन्दगी का चित्र प्रस्तुत करते है ।

"छोटी–छोटी मोती जैसे दॉतो की किरणे बिखेर कर नील कमल की कलियों जैसी ऑखों में भरकर अनुनय सादर।'

"फटी दरी पर बैठा है चिर–रोगी बेटा राशन के कंकड बीन रही पत्नी बेचारी/गर्भभार से अलस शिथिल है अंग–अंग।"

प्रस्तुत प्रथम कविता की पंक्ति में एक भिखारिन का चित्र है, तो दूसरी कविता में एक गर्भवती माँ और रोगी बेटे का है। नागार्जुन द्वारा प्रस्तुत ये चित्र इतने सजीव हैं कि इन्हें बिना देखें नहीं व्यक्त कर सकते हैं 'रवि ठाकुर' शीर्षक कविता मं नागार्जुन आभिजात्य वर्ग के वैभव पूर्ण जीवन से अपनी अभाव–ग्रस्त जिन्दगी के तुलना करतें हुए लिखते है–

"पैदा हुआ मैं/दीन हीन अपठित किसी कृषक कुल में/आ रहा हूँ पीता अभाव का आसव ठेठ बचपन से ..../ मेरा श्रुद्र व्यक्तित्व रूद्ध है सीमित है।. .....कलम ही मेरा कुदाल हैं बहुत बुरा हाल है।"

नागार्जुन ने अपनी कविता में इसी अभाव ग्रस्त जिन्दगी पर व्यंग्य किया भूख की पीड़ा उनकी कविता में बार–बार व्यक्त हुई है।। नागार्जुन उन शोषक शक्तियों पर व्यंग्य करते हैं, जो निम्न मध्यवर्ग की जिन्दगी की फटेहाली के कारण हैं। वे पूंजीवाद, साम्राज्यवाद, सम्प्रदायवाद आदि का विरोध करते हैं।

"हाँ बापू निष्ठापूर्वक मैं शपथ आज लेता हूँ/हिटलर के से पुत्र–पौत्र जब तक निर्मूल न होगें/हिन्दू–मुस्लिम –सिख फास्टों से न हमारी/मातृभूमि यह जब तक खाली होगी/सम्प्रदायवादी दैव्यों के विकट खोह/जब तक खंडहर बनेंगे /तब तक मैं इनके खिलाफ लिखता जाऊँगा।"

साम्राज्यवादी शक्तियों एवं पूंजीवादी प्रवृत्ति का किस प्रकार गठबंधन है। वे इस पर व्यंग्य करते हुए स्पष्ट करते है–

"देशी धन्ना सेठ/विदेशी युधिष्ठिरों की शरण माँगते/पूँजी को चाहिए छाँह साम्राज्यवाद की।"

भारत स्वतंत्र होने के पश्चात देश में पूजीवाद का ही प्रभव रहा। भारत–अमेरिका संबंध पर भी नागार्जुन ने व्यंग्य किया है। वे लिखते है। भारत ने अमेरिका जैसी साम्राज्यवादी शक्ति से संबंध बढाया तो जन शोषण ही अधिक होगा–

"ख्याल करो मत जनसाधारण की रोजी रोटी का/ फाड़–फाड़ कर गला न कब से मना कर रहा अमरीका।"

पूँजीपतियों के द्वारा सर्वहारा वर्ग अर्थात् कृषक मजदूर वर्ग का जो शोषण किया जा रहा हैं नागार्जुन उस पर व्यंग्य करते है। नागार्जुन ने अनुभव किया है कि श्रमिक एवं कृषक दोनों का ही शोषण पूँजीपतियों एवं सत्तापतियों द्वारा हो रहा है।

"लाख–लाख श्रमिकों की गर्दन कौन रह है रेत/छीन चुका हैं कौन–करोड़ो खेति हारों के खेत।"

'विजयी के वंशधर' शीर्षक कविता में नागार्जुन उन बाबुओं–मालिकानों पर व्यंग्य करते हैं जों छप्पन प्रकार के पकवान उड़ाते हैं। फिर क्या हुआ' शीर्षक कविता में बुद्धि जीवियों पर व्यंग्य करते हैं। व्यंग्य नागार्जुन की कविता की सबसे बड़ी शक्ति है। नागार्जुन के व्यंग्य के सम्बन्ध में विश्वनाथ प्रसाद तिवारी लिखते हैं, "वैसे तो नागार्जुन के व्यंग्य प्रायः सीधे होते हैं, पर कहीं–कहीं नागार्जुन अपना अद्भूत कौशल दिखाते हैं। कविता के प्रचालित रूप को तोड़कर ऐसा नयापन पैदा करते हैं कि उनका लोहा मान लेना पड़ता हैं।" इसी परिप्रेक्ष्य में उनकी कविता 'अकाल ओर उसके बाद' 'पाँच पूत भारत माता के एवं 'मन्त्र' कविता में देख सकते हैं। 'अकाल और उसके बाद' कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में एक पूरी वास्तविकता दृश्य बन गयी है–

"कई दिनो तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास। कई दिनों तक कानी कुतिया/

.....

दाने आये घर के अन्दर कई दिनों के बाद/धुआ उठा ऑगन के ऊपर कई दिनों के बाद/कौए ने खुजलायी पाँखे कई दिनों के बाद"

कवि अपनी कविता के माध्यम से आर्थिक विषमता का भयावह परन्तु यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। एक ओर भूख, अकाल, महामारी से जन सामान्य दुखी है। उसकी चक्की चुप है। चुल्हा ठण्डा पड़ा है, तो दूसरी ओर संपन्न वर्ग हैं, जो ऐश्वर्य और वैभव की मस्ती में मस्त हैं।

"सौ का खाना एक खा रहा आती नही डकार, बीच रोड पर मचल रही है..... ।"

धनिक वर्ग एवं अभाव ग्रस्त वर्ग की विषमता की खाई इतनी गहरी है की धन संपन्न वर्ग विवाह आदि के अवसर पर अपने वैभव

का उन्मुक्त प्रदर्शन करता हैं और अभावग्रस्त जूठन पर जी रहे हैं–

"चाट रहे हैं कुछ प्राणी बाहर जूठन को दोने/चहक रहे हैं अंदर ये लक्ष्मी पुत्र सलोने"/हिन्दुस्तान के विकास के नाम पर शासक वर्ग ने 'पंचवर्षीय योजना का काफी ढोल पीटा था। उसको नागार्जुन ने' हिंडिबा को हिचकी' तथा 'सुरसा की जंभाई' कहा था। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू की अमेंरिकी परस्त नीति पर व्यंग्य किया है। आजादी के पूर्व के तथा बाद के भारत के शासक वर्ग के चरित्र में नागार्जुन कोई फर्क नही पातें है जिसकी वजह से उनके व्यंग्य में धार और पैनापन लिये हुऐ परिलक्षित होती हैं–

"पुलिस और पल्टन के हाथी कितना चारा खाते हैं
बाढ़, अकाल,महामारी में काम कुछ नही आते है
देश भक्ति की सनद मिल रही आए दिन शैतानों को।"

संसदीय जनतंत्र के नाम पर चल रहे पाखंड की तीखी आलोचना करते हुए कवि को कहना पड़ा कि 'अब तो बंद करो है देवी यह चुनाव प्रहसन यही पर मानवीय जीवन मूल्यों' जनतांत्रिक मान्यताओं पर आने वाले भावी खतरों को जन कवि देख रहा था कविता' 'श्लोकों में गूजेंगें अब की फौजी अध्यादेश' के माध्यम से व्यक्त करता हैं। नागार्जुन की राजनीतिक रचनाएँ जहाँ एक ओर शासक वर्ग की दमन, बर्बरता तथा हिंसा के बढते हुए रूपों की उघाड़ती हैं। वही नागार्जुन अपनी कविता में पैनापन तथा व्यंग्य का स्वर मुखर बनाए रखने में इसलिए सफल हो सके हैं। क्योंकि जनता के बढ़ते हुए प्रतिरोध को रेखांकित करते है। "खिचड़ी विप्लव" आग लगाने जहॉ पुलिस मिलिट्री तंत्र के बढ़ते कदम तथा उत्पीड़न को दर्शाती हैं। 'क्रांति सुग बुगाई है'। कविता में अगले पचास वर्ष बिना किसी श्रम से पैदा की गई क्रांतियों पर व्यंग्य करती है। चुनाव के दिनों में नेताओं द्वारा टिकट लेने की होड़ लगी रहती है। और टिकट लेने के बाद नेता दिल्ली से लोटे है उन पर व्यंग्य करते है–

"स्वेत श्याम रतनार आंखिया निहार के/सिण्डीकेरी
प्रभुओं की पग धूर झार के/दिल्ली से लौट रहे हैं कल
टिकट मारके/खिले है दाँत ज्यों दाने अनार के/आये
दिन बहार के/"

नागार्जुन ने राजनीतिक, सामाजिक यथार्थ परक व्यंग्यात्मक रचनाऍ काफी संख्या में लिखी है। नागार्जुन ने अपनी व्यंग्य परक रचनाओं में समाज के किसी वर्ग को नही बक्शा कवि ने यथार्थ को पकड़कर अपनी कविताओं में उसकी अभिव्यक्ति की है। इनकी रचनाओं में शुरू से आखिर तक यथार्थ और व्यंग्य परिलक्षित होता हैं। अन्य रचनाओं में "देखना ओं गंगा मैया 'खुरदुरे पैर' 'फिर क्या हुआ' 'सौन्दर्य प्रतियोगिता' और जयति नखरंजनी जैसी कविताऍ उल्लेखनीय हैं।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोधपत्र में नागार्जुन के काव्य में व्यंग्य को लेकर अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि उन्होंने अपनी कविताओं में युगीन विषमताओं को चित्रित किया है। उनकी कविताओं में सम्पूर्ण देश का दर्द समा गया है। ग्रामीण और नगरीय जीवन दोनों की विषमताओं के सजीव करूण चित्र अपनी कविता में व्यंग्य के माध्यम से चित्रित किए हैं। उच्च वर्ग के निम्न वर्ग पर अत्याचार और आधुनिक जीवन की प्रति कठोर व्यंग्य किये है। नागार्जुन के काव्य में व्यंग्य सर्वत्र है। अपने जीवन से प्रारंभ कर समाज के प्रत्येक पक्ष पर अपेक्षानुसार कवि ने व्यंग्य है। व्यंग्य करने में उनका मुकाबला कम कवि कर सकेंगे। भ्रष्ट व्यवस्था, पाखण्ड, शोषण, अन्धविश्वास आदि पर तिलमिलाने वाला व्यंग्य नागार्जुन करते हैं। व्यंग्य की यह शक्ति नागार्जुन में कबीर जैसी ही है। यही शक्ति उनको आधुनिक कवियों के बीच पहला स्थान देती है, जिससे आलोचक सहमत हैं।

संदर्भ :

(1) नागार्जुन चुनी हुई रचनाएँ : खण्ड 2, भूमिका शिवकुमार मिश्र, पृ0 16.

(2) *छायावादोत्तर हिन्दी कविता : प्रमुख प्रवृतियाँ, डॉ. त्रिलोचन पाण्डेय, पृ0 85.*

(3) *इतिहास और आलोचना : नामवार सिंह।*

(4) *मार्क्सवाद और आधुनिक हिन्दी कविता : जगदीशवर चतुर्वेदी, पृ0 129.*

(5) *युगधारा, पृ0 12.*

(6) *नागार्जुन चुनी हुई रचनाएँ–2 : शोभाकान्त मिश्र, पृ0 77.*

(7) *युगधारा, पृ0 29.*

(8) *नागार्जुन चनी हुई रचनाएँ, पृ0 26.*

(9) *युगधारा, पृ0 99.*

(10) *नागार्जुन रचनावली खण्ड–1 : शोभा कान्त, पृ0 105.*

(11) *समकालीन हिन्दी कविता : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ0 62.*

(12) *हजार–हजार बाहों वालीं : नागार्जुन, पृ0 54.*

❁❁

An International,
Registered & Referred
Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 61-62
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

नासिरा शर्मा का उपन्यास 'अजनबी जज़ीरा' अर्थात् इराक की बदहाली का जीवन्त दस्तावेज़

प्रस्तुत शोधपत्र में नासिरा शर्मा के उपन्यास 'अजनबी जज़ीरा' में अभिव्यक्त मानवीय संवेदनाओं और भावना के द्वंद्व के साथ समाज में फैले हुए आतंक को सशक्त अभिव्यक्ति दी है। ऐसे में कथा-लेखिका, समकालीन लेखिकाओं के बीच एक अलग महत्व रखती है। उसकी वजह उनके विषयों का चयन और विषय के साथ उसके ट्रीटमेंट के लिए जानी जाती है। आज पूरा संसार आतंक से आतंकित है। इसके बीच लेखिका इस उपन्यास के माध्यम से यह संदेश देना चाहती है कि आतंकवाद से हम सभी को जूझना होगा और समाज को प्रेम और शांति का पाठ पढ़ाना होगा। इनकी भाषा सटीक है। उपन्यास के पात्रों में विदेशी और स्वदेशी प्रेम का द्वंद्व है। पात्रों के जेहन में यह सवाल लगातार गूंजता है कि जंग ज़दा मुल्क में बमबारी, बंदूक, ख़ून, मौत बहुत हो गई। अब यह भयावाह दृश्य बदलना चाहिए। भाषा के स्तर पर बिम्ब, प्रतीक के साथ उर्दू भाषा का भी प्रयोग किया गया है।

डॉ.ज़ाहिदा जबीन

भूमिका :

सन् 2012 में नासिरा शर्मा का उपन्यास, 'अजनबी जज़ीरा' प्रकाश में आया है, जिसके 144 पृष्ठ ग्यारह अध्यायों में विभाजित हैं और उपन्यास की कथा–भूमि इराक है। 'अजनबी जज़ीरा' में समीरा और उसकी पांच बेटियों के माध्यम से इराक की बदहाली बयान की गई है। ...विरासतों, धरोहरों, यादगारों को बाजार में बेचने के लिए मजबूर होते लोग; जिन्दगी बेचने के लिए सब कुछ दांव पर लगाती औरतें और विदेशी आक्रमणकारियों की प्रत्यक्ष– अप्रत्यक्ष निगरानी में सांस लेते नागरिक ऐसी अनेक स्थितियों – मनःस्थितियों को नासिरा शर्मा ने इस उपन्यास के पृष्ठों पर साकार कर दिया है।' (उपन्यास के फ्लैप से) इसी बीच उपन्यास नारी–विमर्श का पक्षपात भी कर रहा है, जहां नायिका– समीरा के जीवन का संघर्ष, पवित्रता, ममता, साहस, अर्पण और प्रेम का विवरण मिलता है। उपन्यास प्रेमी मार्क तथा समीरा की प्रेम कथा भी है। आक्रमणकारी दल के साथ बगदाद की भूमि पर आया अंग्रेज़ फौजी– मार्क वहां अपनी 'प्रेम– कहानी बारूदों से भरी हवाओं पर लिखने की कोशिश कर रहा था।' (135)

इराक पर विदेशी आक्रमणकारियों के आगमन के साथ ही देश और नायिका समीरा दोनों की खुशहाली और सम्पनता अस्त–व्यस्त हो गई। समीरा अपने पति जो इराक सत्ता से सम्बन्धित था, को सत्ता विरोधी शकितयों से छिपाने और अपनी जवान हो रही पांच बच्चियों को भेड़ियों की नज़र से बचाने के लिए बाध्य हो गई। पुरानी सरकार के लोगों को अंग्रेज़ फौजी बिलों से निकाल–निकाल कर मार रहे थे। ऐसे में समीरा का पति और बेटियों के साथ गुमनाम जीवन जीना कठिन था। बारूदी हवाओं में समीरा के दमे के शिकार पति का सांस लेना दूभर हो गया। समीरा हर हाल में अपने परिवार की सुरक्षा और भूख का निवारण करने में संघर्षरत थी। 'मुल्क से जाने वाले बड़ी– बड़ी रिश्वतें दे विदेशों की तरफ उड़ान भर रहे थे। पर उसके पास ऐसी कोई कीमती चीज़ नहीं बची थी, जिसको बेचकर वह सात वीज़ें खरीद सकती। बाज़ार में कुछ भी बिक सकता था और इसी एक चीज़ ने उसके परिवार को भूख से बचाया। मगर कब तक, कहां तक?' (12) समीरा की लाख कोशिशें भी उसे बत्तीस वर्षीय विधवा होने से नहीं बचा सकीं।

इराकी समाज में विधवा का पुर्नविवाह मान्य था। समीरा को घर के रक्षक की आवश्यकता तो थी। किन्तु इस विषय पर सोचने वाला कोई भी तो न बचा था।' मां– बाप बसरा की बमबारी में मर गऐ। अपना घर भी मलबे में बदल गया। मायका छूटा तो ससुराल में कौन बचा सिर्फ चाचा। बाकी सब नज़र हो गए बमों की बारिश की या विदेश जा बसे।' (45)

इराक देश में भूख, गरीबी इस हद तक बढ़ गई थी कि लोग अपने घरों से कीमती सामान निकाल– निकाल कर बेच कर पेट की आग बुझाते थे। 'छोटी– छोटी दुकानें लगाए मर्द उकडूं बैठे थे। गर्दनें उनकी झुकी हुई थी। उनके सामने उनके घर की चीज़ें सजी थीं।' (28) वक्त– बेवक्त हो रही बमबारी से लोग सहमें हुए से रहते थे। आज को जी रहे लोगों को कल का कुछ ज्ञात न था। 'विदेशी फौजी दस्तों और मर्द समय से पहले बूढ़े हो रहे थे।' (45) आधी रात होने वाले धमाकों में जनता का डरना, रोना कोई नहीं सुन सकता था।

खाने–पीने के सामान के दाम आसमान छू रहे थे, खरीद पानी में असमर्थ लोग अपने पेट को समझाने में भी असमर्थ थे। महिलाएँ चोरी और देह–व्यापार करने के लिए भी विवश हो गई थीं। 'किसी बुढ़ी औरत ने दो कुब्बे (रोटी) छुपा अपनी अबा में डाल लिए थे। बुढ़ी औरत पकड़े जाने पर थर– थर कांप रही थी। चेहरे पर हवाइयां उड रही थीं और आंखों से बेतहाशा आंसू की लडियां गिर रही थीं।' (23) यह दो रोटियां उसने अपने कल से भूखे दो नवासों के लिए चुराई थीं।

वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग), कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर, हज़रतबल, कश्मीर (जम्मू एवं कश्मीर)

बाज़ार में भटकते हुए समीरा की भेंट अपनी सहेली रूया से होती, जिसकी दोनों बेटियां फरीबा और जेबा लापता हैं और पति घर पर मरणासन्न है। उसकी आय का एकमात्र साधन उसकी देह है। वह कहती है, ''मैं अपना बदन नुचवाती हूं.....अपने हम शहरियों से. .....और क्या करूं। ईमान को लेकर चाटूं या इस्मत को लेकर नाचूं?....अलबाकर (पति) मुझे गाली देता है, बदकार और बेवफ़ा कहता है।.....फिर मेरे पैरों पर गिरकर फूट–फूट कर रोता है, जब इन पैसों से उसके पेट की आग बुझाती हूं। उसके लिए पेन किलर और मालिश का तेल खरीदती हूं। ज़िन्दगी का इतना बदसूरत चेहरा देखने के हम हकदार नहीं थे, जो हम ने बोया नहीं वह हम क्यों काट रहें हैं?'' (27)

समीरा को 'फौजियों को अरबी भाषा का सरल ज्ञान देने के लिए।'' (34) कहा गया था, न चाहते हुए भी आय की लालच में नौकरी तो करती थी, किन्तु अपनी कुंठा में उसने एक फौजी को गलत उच्चारण पर ज़ोरदार चांटा मारा तो शाम को वह सादे कपड़ों में उसके घर तक पीछा करते हुए आ गया। समीरा अपना घर छोड़ कर एक छोटे से मुहल्ले में चाचा के पुराने घर पर छिप कर रहने के लिए विवश हो जाती है। ''जिस समाज में जवान मां पर नज़रें गड़ी हों वहो पर कमसिन लडकियों की क्या सुरक्षा है ?'' (52)

समीरा की पांचों बेटियां– साजदा, वफ़ा, लैला, सबा, नेदा– खिड़कियां, दरवाजें बन्द किए जमाने का नज़रों से दूर घर में कैद पडी रहतीं। मन बाहर जाने के लिए छटपटाता जरूर, लेकिन दूसरे ही पल अपनी सुरक्षा का ध्यान आते ही मन मसोस कर रह जातीं। प्यारे शहर बगदाद को याद करती और हाल जानने के लिए उत्सुक होती, किन्तु घर के सारे कीमती सामान के साथ ''टी. वी. भी बिक चुका था। रेडियो खराब था। खिडकियों के पल्लों पर कीलें ठुकी थीं। बाहर की दुनिया से उनका रिशता लगभग कटा हुआ सा था।''(38) वह दिन भर खिडकी की दरार से बारी–बारी बाहर का दृश्य देखती और अपने स्कूल के दिनों को याद करती और मां का बाज़ार से लौट कर आने, खाने के सामान की प्रतीक्षा करती रहती थीं। घर में तंग आकर लडकियां आत्महत्या के बारे में भी सोचती थी, किन्तु लडकपन के सपनों में एक आशा की किरण उन्हें रोके हुए थी। कभी अपने लडकी होने पर अफसोस कर कहतीं, ''काश अम्मी! हम लडके होते तो अपका दुख इतना गहरा न होता, न फिक्र में आप यूं पिघलती।''(58) किन्तु मां जानती थी, तब भी उसकर कष्ट कम न होता। उसे जवान बेटों को देश के लिए जंग पर भेजना पड़ता।

उपन्यास समीरा के चाहने वाले अंग्रेज फौजी के पक्ष से क्षत–विक्षत इराक की एक मार्मिक व्याख्या प्रस्तुत करता है। समीरा और मार्क की प्रेम कहानी अदभुत है, जिसमें जिम्मेदारियों के हस्सास रंग शिद्दत से शामिल हैं। घृणा और प्रेम का सघन अर्न्तद्वन्द्व इसे अपूर्व बनाता है।'' (उपन्यास के फ्लैप से)

मार्क एक विदेशी फौजी था, जिसकी पत्नी और दो बच्चियां अमरीका के 'ट्वीन्सटावर ब्लासट' में प्राण खो बैठी थीं। बगदाद की भूमि पर विदेशी आक्रमणकारी फौजी के साथ आकर वह बगदाद को तहस–नहस करते हुए बगदाद का ही हो गया। वहां के नागरिकों को डराते–धमकाते उन्हीं को दिल दे बैठा।'' सभी जानते हैं कि पिछले चन्द वर्षों में सिरफिरे जोशीले मार्क ने जिसका रोम–रोम अरब नफरत से सुलगता रहता था, वही मार्क एक दिन बदल कर रह गया। वह अन्धाधुन्ध गोली चलाना भूल गया था।.....उसके अन्दर का इन्सान उस दिन जाग उठा।.....''(134) वह मार्क समीरा से प्यार करने लगा और यह जानते हुए कि वह पांच बेटियों वाली विधवा है, उससे विवाह कर उसका सहारा बनना चाहता है। वह पांचों लडकियों को पिता का संरक्षण देकर देश से दूर ले जाना चाहता है।

समीरा को मार्क का यह निस्वार्थ प्रेम समझ में न आया, बल्कि वह इसे एक दुश्मन फौजी का अत्याचार समझ रही थी। जबकि मार्क केवल एक फौजी का कर्तव्य निभा रहा था, वरना उसे समीरा या उसके देश से कोई बैर न था। ''मैंने आत्मरक्षा की है। मगर किसी निहत्थे अरब पर गोली नहीं दागी।''(71)

भाषा की प्रतीकात्मकता के नए संदर्भ भी उपन्यास में मिलते हैं। उदाहरणार्थ– ''बगदाद का आसमान अकबों से भरा है जो एक झपटे में ताज़ा कबूतरों को अपनी हवस का निवाला बनाने को बेचैन हैं। ....इन्सान इतनी बन्दिशों के बावजूद नहीं सुधरा। उसके अन्दर का जानवर वक्त पड़ने पर दरिन्दों से भी ज्यादा खतरनाक हो उठता है।'' (59)

उर्दू भाषा की सुन्दर शब्दावली का प्रयोग कर लेखिका ने उन किशोरियों के मन की स्थीत का चित्रण किया है, जो अपनी इच्छाओं और उमंगों का दमन करने के लिए विवश है। ''यह भटके सवाल, यह सफर करते खयालात, यह बेमकसद जिन्दगी के चौराहे पर खडी लडकियां और गुम हो गई पगडंडियां, उन्हें कोई मंजिल आवाज़ नहीं देती हैं और न कोई हमक़लाम होता है ?'' (67)

एक महिला के मन की दुविधा और द्वन्द्व को इन पंक्तियों में स्पष्ट देखा जा सकता है, जहां वह विदेशी प्रेमी और स्वदेश प्रेम दोनों में से किसी एक का चयन करने में असमर्थ है।– 'उसके जहन में यह सवाल गुंजा, जंगज़दा मुल्क में बम्बारी, बन्दूक, खून, मौत की आदी हो गई आबादी को अब बदन की जरूरत भी उसी शिद्दत से महसूस होती है.....'(78)

समीरा और मार्क की प्रेम–कथा के अतिरिक्त उपन्यास में कई प्रासंगिक कथाएँ मिलती हैं, जैसे– रूया की कथा, मुस्तफा की कथा, जैनब की कथा, बूढ़ी औरत का प्रसंग, अनाथ बालक की कथा आदि– जो उपन्यास में एक प्रवाह भर रही है।

'बमों से खंडहर हुई खानकाह'(29), 'अवाम को भयभीत करने के लिए फौजी गाडियां और टैंक'(33)– उपन्यास में इस प्रकार की शब्दावली का अनायास प्रयोग हुआ है, जिससे इराक का युद्धग्रस्त होने के दृश्य स्पष्ट खींचते हैं। मार्क के अंग्रेज़ी संवाद भाषा को पात्रानुकूलता देते हैं। फ्लैश बैक पद्धति, बिम्बों, प्रतीकों और उर्दू भाषा के सुन्दर शब्दों ने उपन्यास में सुन्दरता का समावेश किया है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत अध्ययन और विवेचन से स्पष्ट है कि उपन्यास में युद्धग्रस्त समाज की कठिनाइयों और परेशानियों में प्रेम की एक किरण देखने को मिलती है। उपन्यास में ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं, जहां समान अर्थों वाले शब्दों का प्रयोग कर संवेदना को उभारने का सफल प्रयास किया गया है। कहा जा सकता है कि चर्चित उपन्यास इराक की बदहाली का जीवन्त दस्तावेज़ होने के साथ ही मानवीय संवेदनाओं और भावनाओं के अंतर्द्वन्द्व का सौन्दर्य लिए हुए है।

संदर्भ :

(1) शर्मा नासिरा (2012) : अजनबी ज़जीरा।

❁❁

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 63-64
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

आशापूर्णा देवी के चर्चित उपन्यास 'सुवर्णलता' की प्रमुख नारी पात्र के द्वंद्व और संघर्ष के साथ उससे मुक्ति के संदर्भ में अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में आशापूर्णा देवी के चर्चित उपन्यास 'सुवर्णलता' की प्रमुख नारी पात्र के द्वंद्व और संघर्ष के साथ उससे मुक्ति के संदर्भ में अध्ययन किया गया है। सुवर्णलता बंधनग्रस्त समाज में नारी की छटपटाहट को मुखरता से व्यंजित करती है। यह गाथा समाज की रुढ़ियों से बंधनमुक्त होने की आकांक्षा से लिपिबद्ध की गई है। एक 'मुक्तिकामी आत्मा' में सत्यवती जैसा विद्रोह नहीं है, बल्कि संक्रांतिकालीन छटपटाहट ही अधिक दिखाई देती है। इसके बावजूद लेखिका की वह लड़ाई जो 'प्रथम प्रतिश्रुति' में शुरु हुई थी, सुवर्णलता में और तीव्रतर होती है।

डॉ.(श्रीमती) संध्या खरे

परिचय :

बंगला उपन्यास के इतिहास का तृतीय पर्व महिला उपन्यासकारों को समर्पित है। इस तृतीय पर्व की सबसे महत्वपूर्ण लेखिका त्रयी है, आशापूर्णा देवी, मैत्रेयी देवी एवं महाश्वेता देवी। सम्पूर्ण इतिहास का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि बंकिमचंद्र, रवीन्द्रनाथ तथा शरतचंद्र के उपरान्त बंगला पाठक समुदाय को ही नहीं अपितु समग्र भारतीय पाठक समुदाय एवं साहित्य (हिन्दी अनुवाद के रूप में) को अकेली आशापूर्णा देवी ने जितना समृद्ध एवं प्रभावित किया है, उतना अन्य किसी बंगला रचनाकार ने नहीं।

सुवर्णलता आशापूर्णा देवी रचित सुवर्णलता उपन्यास की नायिका है। सुवर्णलता के द्वारा नारी के मन की पीड़ा, वंचना, मुक्ति की छटपटाहट सामने आती है। सुवर्णलता 'प्रथम प्रतिश्रुति' उपन्यास की नायिका सत्यवती की आत्मजा हैं। अपने अगले रूपांतर यानि सुवर्णलता के रूप में सत्यवती का संघर्ष और ज्यादा प्रौढ़ एवं गतिशील हो जाता है।[1] सुवर्णलता स्वयं आशापूर्णा देवी के निजी जीवन, युगबोध एवं दर्शन को प्रतिकृत व प्रतीकित करती है। ऐसा स्वयं आशापूर्णा देवी ने स्वीकार किया है :

''अपनी तमाम पात्राओं में मुझे अपनी ''सुवर्णलता'' सर्वाधिक प्रिय है। बात यह है कि प्रत्येक लेखक अपनी रचना में अपना जीवन दर्शन पिरोना चाहता है। सुवर्णलता के माध्यम से मैंने कमोबेश अपनी बात करने की कोशिश की है। मुझे कभी–कभी उसमें अपना प्रतिरूप दीख पड़ता है। ऐसा जाने–अनजाने में हो गया है। पिंजरे में बंद किसी पंछी की तरह छटपटाती और आकाश में उड़ने को तड़फड़ाती जिंदगी की तरह। मैंने इस स्थिति को एक प्रतीक के रूप में लिया है।''[2]

सुवर्णलता आशापूर्णा देवी रचित गाथात्रयी की आत्मा है। नारी–पराधीनता की पीड़ा, नारी की स्वतंत्रा की कामना, स्वतंत्रा का दमन, सम्मान एवं स्वाधीनता हेतु निरंतर संर्घष और अंतिम प्राप्तव्य केवल पराजय मात्र ! यदि इन सारी स्थितियों को किसी एक नाम में समाहित करना हो, तो वह नाम होगा सुवर्णलता।

सुवर्णलता स्त्रीविरोधी वातावरण के मरूस्थल में एकाकी पदयात्री है। उसके लिये कहीं अनुकूल वायु का झोंका नहीं है उसके चारों ओर परिवार, वंश–मर्यादा, नियम–कायदों की ऊंची प्रचीरें हैं। तथा सुवर्णलता के सिर पर उसके पति और सास के रूप में दबंग, अत्याचारी, असभ्य व क्रूरता की चरम सीमा तक पहुंचे हुये पहरेदार है। जबकि झगड़ा–झांटी, ईष्या–द्वेष, स्वार्थ के लिये मारामारी सुवर्ण को यह सब फूटी आंखों भी नहीं सुहाता।[3] लेकिन इसी के साथ सुवर्णलता गुरूजनों के मान–सम्मान की रक्षा के नीति–नियम, धारा– अनुच्छेद आदि मानकर चलने में वैसी उत्साही नहीं है। वह यह नहीं जानती कि बिना कारण के गाली सुनकर चुप रहना चाहिए। वह नहीं जानती अहेतुक खुशामद और .खातिर करनी चाहिए।[4] और यही उसका अपराध है।

सुवर्णलता निरंतर बाहरी बयार का स्पर्श पाती है, बाहर की आंधी उसे झकझोरती है। बाहरी जगत की पगध्वनि सबके कानों के बंद रहने पर भी सुवर्णलता के कानों तक जा पहुंचती है। इसीलिये स्वदेशी आंदोलन का जो संदेशा दूसरों के कानों के बगल से निकल जाता है, बदन के चमड़े पर से फिसल जाता है, वही संदेशा सुवर्णलता के चमड़े को जलाकर फफोला उगा देता है। कानों में गरम सीसा ढालकर मन के भीतर गहरा जख्म कर देता है।[5]

सुवर्णलता ने भव्यता चाही, सभ्यता चाही, आदमी की तरह जीना चाहा। बाहर की दुनिया से नाड़ी का योग रखना चाहा, उसने देश के बारे में सोचना चाहा, देश की पराधीनता का अंत चाहा। तो फिर सुवर्णलता को उसका पति, सास, जेठ, देवर पागल क्यों न कहें।[6]

प्राध्यापक (हिन्दी विभाग), शासकीय महाराजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (मध्यप्रदेश)

फिर भी सुवर्णलता हिम्मत नहीं हारती, उसने प्रकाश नहीं पाया न सही, परन्तु वह अपनी संतति के लिये प्रकाश छोड़ जायेगी। लेकिन वह संतति भी सुवर्णलता का उचित मूल्यांकन नहीं कर पाती। क्योंकि सुवर्णलता के भीतर वस्तु थी, सपना था, थी आदमी की तरह जीने की दुर्दमनीय आकांक्षा। भव्यता, सभ्यता, सौकुमार्य ! युद्ध की रसद जुगाते–जुगाते ही वह सम्पद् जाता रहा।[7] फलतः सुवर्णलता के खाते में आता है एक बड़ा शून्य !

सामाजिक रूढ़ियों और मान्यताओं के खिलाफ व्यक्तिगत स्वतंत्रता का दावा प्रस्तुत करते हुए सुवर्णलता का बाहरी विन्यास भले ही ''प्रथम प्रतिश्रुति'' की अपेक्षा समझौतावादी दिखे परन्तु उसकी अन्तर्वस्तु व भावधारा वैसी ही है। क्योंकि सुवर्णलता भी अपनी मां सत्यवती के रक्त–मांस से बनी है। जो सत्यवती मिथ्या से समझौता करके कभी नही चल सकी, अन्याय देख कभी चुप नही रह सकी।[8]

आजीवन संघर्ष करते–करते अपने अंतिम काल में वह मानो पतवार छोड़ देती है, परास्त हो जाती है। वह नारी जन्म लेना नहीं चाहती परन्तु जिस प्रकार दीपक की लौ बुझते समय भभक् उठती है, उसी प्रकार सुवर्णलता अपने अंतिम क्षणों में नये संकल्प के साथ दुबारा उठ खड़ी हुयी, कहा था अब नहीं चाहती। जाते समय कह जाती हूं, चाहती हूं। इसी देश में, स्त्री होकर ही ! बदला नहीं चुकाना है।[9]

अपने अंतिम प्रस्थान की यात्री सुवर्ण नहीं जानती कि भविष्य उसे किस रूप में याद करेगा ? उद्धत ! अविनयी ! धृष्ट ! ठीठ ! पागल ! अहंकारी ! वाचाल ! बेअदब ! असती ! कठिन–कठोर ! पति–विरोधी स्त्री ! इत्यादि .... इत्यादि.... इत्यादि.....?

आजीवन प्राप्त इन सारे विशेषणों के बावजूद सुवर्णलता के अंतिम प्रस्थान का दृश्य समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ, फूलमाला, धूप, अगरबत्ती, गुलाबजल, तशर की साड़ी, पालिशदार खाट, कंगला, भोजन इत्यादि–इत्यादि। जिस समारोह को देखकर नये सिरे से सबने सुवर्णलता के सौभाग्य से ईर्ष्या की।

सुवर्णलता के मृत्यु समारोह की भव्यता चिरस्थाई हो गयी। क्योंकि मरते तो अनेक हैं, लेकिन सुवर्णलता की बात जुदा है। सुवर्णलता परिपूर्णता की प्रतीक है। फल–फूल, व्याप्त विशालता में वनस्पति के समान।..... जगर–मगर जीवन, जगर–मगर मृत्यु।[10]

संदर्भ :

(1) डॉ. साहा रणजीत : बाड़ला कथा– साहित्य और आशापूर्णा देवी का रचना–संसार : परिशिष्ट : प्रारब्ध, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 5, वर्ष 2003, पृष्ठ क्रं. XXX.

***(2)** डॉ. साहा रणजीत : भूमिका, किर्चियॉं, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 4,वर्ष 2003, पृष्ठ क्रं. 250.*

***(3)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 9.*

***(4)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 62.*

***(5)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 128.*

***(6)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 38.*

***(7)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 108.*

***(8)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 52.*

***(9)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 461.*

***(10)** आशापूर्णा देवी : सुवर्णलता, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण : 2, वर्ष 2001, पृष्ठ क्रं. 462.*

❁❁

An International,
Registered & Referred
Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 65-66
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की इतिहास दृष्टि : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की इतिहास दृष्टि को लेकर अध्ययन किया गया है। द्विवेदीजी की इतिहास दृष्टि में साहित्य, संस्कृति, सामाजिक-धार्मिक आंदोलन और समाज की मानवीय चेतना प्रमुख रही है। द्विवेदीजी सामान्य रुप से भारतीय जन और विशेषकर शोषित, पीढ़ित और प्रताड़ित समाज के कल्याण लिए प्रतिबद्ध रहे हैं। उनकी विशेषता यह है कि वे मानववादी और इतिहासवादी तो रहे, पर मार्क्सवादी कतई नहीं। उनके निबंध और उनका पूरा साहित्य इस बात का प्रमाण है। यद्यपि उनकी रचनाएँ प्रगतिवादी स्वर लिए हुए हैं, लेकिन मार्क्सवाद के समर्थन से बिल्कुल दूर है। उनके उपन्यासों में परंपरा और आधुनिकता, प्राचीनता और नवीनता का अद्‌भूत सामंजस्य मिलता है, यही उनके साहित्य की शक्ति और प्रासंगिकता है।

प्रा.सुनील रा.मावस्कर

भारत के इतिहास और अतीत में झाँकने की द्विवेदीजी की दृष्टि मूलतः साहित्यिक और सांस्कृतिक है। वे भारतीय इतिहास के सांस्कृतिक पक्ष को सामाजिक आर्थिक आंदोलन जैसे सिध्द, नाथ, मध्यकालीन साहित्य का विश्लेषण, उनके माध्यम से समझने और समझाने की चेष्टा करते है। द्विवेदीजी ऐतिहासिक उपन्यासकार है। ऐतिहासिक उपन्यास तथा उपन्यासकार के संदर्भ में वे लिखते हैं ''ऐतिहासिक लेखक का वक्तव्य तथा इतिहास की जानकारी उस युग की प्रामाणिक पुस्तकों, मुद्राओं और शिलालेखों के आधारपर जांची हुई होनी चाहिए। ऐतिहासिक उपन्यासों का लेखक मृत घटनाओं और अर्ध्दज्ञान या नाममात्र से परिचित व्यक्तिओं के कंकाल में प्राण संचार करता है। कल्पना उसका प्रधान अस्त्र हैं पर उस कल्पना के साथ उसकी जानकारी का सामंजस्य होना चाहिए। अगर उसके कल्पना के पोषक प्रमाण प्रामाणिक नही हुए तो रसास्वाद में पद–पद पर बाधा पहुँचेगी।''(1)

द्विवेदीजी की इतिहास को देखने की पध्दति साहित्य संस्कृति, सामाजिक–धार्मिक आंदोलन और मानवीय चेतना पर टिकी है। द्विवेदीजी सामान्य रूप से भारतीय जन और विशेषकर शोषित, वंचित, पीडित जन के कल्याण के प्रति प्रतिबध्द है। मार्क्सवादी रूप में नहीं। 'सावधानी की आवश्यकता' निबंध में लिखते है ''हमारे युवा साहित्यकारों में से अधिकांश अपने को 'प्रगतिशील' कहते और समझते है। इनकी प्रगतिशील कही जानेवाली रचनाओं में कही श्रेणी की चीजें है। यह बिल्कुल गलत धारणा है कि, सभी प्रगतिवादी रचनाएँ मार्क्सवादी विचारधारा का समर्थन या प्रचार करती है।''(2)

द्विवेदीजी के अनुसार इतिहास मनुष्य की तीसरी आँख है। वह हमें पीछे की ओर झाँकने की क्षमता देता है। उनका इतिहास बोध में गहरी आस्था होने के बाद भी वे साहित्य और रस के न्याय को इतिहास के ऊपर मानते हैं। उनका कहना है कि, ''इतिहास केवल ऊपर की वास्तविकता देखता है। उस अंतर्निहित सत्य को नहीं देखता जो मनुष्य के उत्थान में सहायक हुआ है। इतिहास के सिध्दान्त बदलते रहते हैं, पर जो इतिहासपरक उपन्यास है यदि उसमें सचमुच रस है तो वे सदा रहेंगें। ऐतिहासिक पात्रों का सहारा लेकर मैंने रस की सृष्टि की है और रस से बडा कोई न्याय नहीं है।''(3)

इतिहास के प्रति कैसी दृष्टि हो, इस पर वे अपने निबंध 'शव साधना' में कहते है – ''प्राचीन आचार–विचार, क्रिया–कलाप के अध्येताओं को देखता हूँ, तो तांत्रिक शव–साधना की याद आती है। जिसका अध्ययन कीजिए, वहीं बैठे न रह जाइए। साधना से क्या होगा? अतीत संग्रहालय की वस्तु नहीं।''(4) 'स्वतंत्रता संघर्ष का इतिहास,' 'साहित्य का इतिहास,' 'राष्ट्रीय संकट और हमारा दायित्व', आदि निबंधो में द्विवेदीजी की सजग इतिहास दृष्टि का प्रत्यक्ष उदाहरण देखने को मिलता है।

द्विवेदी जी के उपन्यासों में परम्परा और आधुनिकता, प्राचीनता एवं नवीनता का विरल सामंजस्य मिलता है। अतीत की घटनाओं को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करते हुये उन्होंने ऐसे सुदृढ एवं अविस्मरणीय मानवीय चरित्रों की सृष्टि की है, जो सदैव जनमानस को प्रेरणा देते रहेंगे। प्राचीन भारतीय साहित्य के गौरव ग्रंथ ही मुख्य रूप से द्विवेदीजी के उपन्यासों के उपजीव्य रहे है वे काफी हद तक प्राचीन संस्कृत साहित्य एवं साहित्यकारों से प्रभावित है। कालीदास का तो द्विवेदीजी की रचना कला पर गहरा प्रभाव दिखाई देता है। प्राचीनता का संवाहक होने पर भी द्विवेदीजी का इतिहास बोध पलायनवादी नहीं है वह नही स्फूर्ति एवं प्रेरणा देनेवाला है। द्विवेदीजी के व्यक्तित्व में इतिहासकार और रचनाकार का विरल संयोग है। अपने उपन्यासों

श्रीमती केशरबाई लाहोटी महाविद्यालय, अमरावती (महाराष्ट्र)

में इतिहास की कठोर और अपरिवर्तनीय रेखाओं से बचकर द्विवेदीजी, कल्पना के पंख खोलकर, ऊँची निर्बाध उड़ान की संभावनाएँ तलाशते है। मुख्यतः उनके उपन्यासों का परिवेश मध्यकालीन है, वे मध्यकालीन कला–विनोद और सांस्कृतिक गतिविधियों पर अपना ध्यान अधिक केंद्रित करते हैं। इतिहास की अपरिवर्तनीय घटनाओं और चरित्र नायकों की अपेक्षा वे लोक–गाथाओं और वीर काव्यों की और जाते हैं। इसी कारण इतिहास के प्रामाणिक एवं अधिकारिक स्त्रोतों की अधिक आवश्यकता उन्हें नहीं होती। अपनी रासायनिक क्षमता से वे अनेक कथाओं एवं गाथाओं को एक में गूँथकर अपने कथा–विवेक और रस –ग्रहण की प्रवृत्ति के सहारे एक सांस्कृतिक आख्यान की सृष्टि करते हैं।

'बाणभटट की आत्मकथा' में हर्षकालीन समाज और संस्कृति का चित्र है और उसमें नारी जीवन का चित्रण ही प्रमुख है। प्रस्तुत उपन्यास में जिस राजनीतिक अवस्था का चित्रण किया गया है, वह अत्यंत अस्थिरता का काल था। इस उपन्यास में जहाँ हर्षयुगीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अवस्था का चित्रण है, वहीं वर्तमान युग की विसंगतियों पर भी करारे प्रहार किए गए हैं।

'चारू चंद्रलेख' में गहडवार राज्य और जयचंद कालीन भारत का चित्रण है। इस उपन्यास के बारे मे मिश्रजी कहते है– ''द्विवेदीजी ने मध्यकालीन भारत के इतिहास को अन्धेरे से उबारा है..... उसके विच्छिन्न विघटित जीवन के व्यक्तिवादी स्वर को संघ–शक्ति के आलोक की ओर उन्मुख कर उसे सामाजिक मूल्यों से जोडना चाहा है और तत्कालीन साहित्य, किवदन्तियों, कथाओं और उपलब्ध इतिहास के अध्ययन, चिन्तन और नवीन व्याख्याओं के द्वारा बिखरें हुए, लुप्त जीवन को एक विराट फलक पर मूर्तिमान किया है।'चारू चन्द्रलेख' को इसलिए मध्यकालीन भारत का दर्पण भी कहा जा सकता है।''[5]

'पुनर्नवा' सम्रुदकालीन भारत का लेखा–जोखा प्रस्तुत करता है। 'अनामदास का पोथा' मूलतः दार्शनिक भित्ति पर रचित उपन्यास है।

संक्षेप में जीवन मूल्यों से अनुप्राणित यह औपन्यासिक साहित्य वर्तमान युग की संवेदनाओं को अपने भीतर समेटे हुए सुन्दर भविष्य के निर्माण की पृष्ठभूमि तैयार करता है।

संदर्भ :

(1) साहित्य सहचर : उपन्यास और कहानी, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. 83.

(2) *सावधानी की आवश्यकता।*

(3) *साहित्य अमृत, अक्टूबर 2005, पृ. 42.*

(4) *साहित्य अमृत, अक्टूबर 2005, पृ. 42.*

(5) *डॉ.रामदरश मिश्र : हिन्दी उपन्यास : एक अन्तर्यात्रा, राजकमल प्रकाशन, पृ. 176.*

(6) *आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों में सांस्कृतिक बोध : संजीव मानावत।*

❁❁

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 67-68
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

ममता कालिया की कहानियों में स्वच्छंद नारी : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में ममता कालिया की कहानियों में स्वच्छंद नारी का अध्ययन किया गया है। पारंपरिक नैतिक आदर्श के बाहर रहते हुए काम-संबंधों का मुक्त आचरण आज की नवीन नैतिक प्रणाली को व्याख्यायित कर रहा है। इन नवीन स्थितियों को अपने जीवन में पुरुष की भांति नारी भी स्वीकार करना चाहती है। हालांकि ये स्थितियाँ अभी आम नहीं हुई हैं, किन्तु महत्वपूर्ण रुप से उल्लेखनीय अवश्य हो गई हैं। विशेषकर स्त्री के इस स्वच्छंदतावादी रुप का चित्रण ममता कालिया ने अपने कथा-साहित्य में किया है। उनकी विभिन्न कहानियों के पात्रों को लेकर स्वच्छंद नारियों का अध्ययन प्रस्तुत शोधपत्र में किया गया है।

प्रा.छाया नारायणराव जोंधळे* एवं डॉ.अरुणा राजेंद्र शुक्ला**

प्रस्ताव-ना :

समाज की नैतिक व्यवस्था का सम्ब-ध एक ओर समाज के विविध नियमों के पाल-ना तथा सदाचार से है, तो दूसरी ओर इसका सम्ब-ध स्त्री-पुरुष के काम सम्ब-धों स्थितियों को व्यक्त कर-ने के लिए किया। इसका प्रमुख कारण यही है कि नैतिकता शब्द का प्रयोग काम सम्ब-धों को ध्वनित कर-ने के लिए अधिक किया जाता है और अ-य सदाचरण सम्ब-धों स्थितियों को व्यक्त कर-ने के लिए किया। इसका प्रमुख कारण यही है कि नैतिकता शब्द समाज में प्रचलित काम सम्ब-धो को लेकर ही अधिक प्रयुक्त होता है। समाज ने नैतिक व्यवस्था के नाम पर स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण तथा काम-सम्ब-धों का विवाह प्रथा द्वारा नियंत्रित एवं संचलित कर-ने का प्रयत्न किया है। किं-तु स्त्री के काम सम्ब-धी आचरण सदैव समाज की नैतिक व्यवस्था के अ-ुरुप व निर्धारित रुप में ही स्थापित नहीं होते, बल्कि स्त्री-पुरुष का परस्पर सहा आकर्षण आसक्ति और प्रेम के माध्यम से समाज की नैतिक व्यवस्था को नकार-ने लगता है, यही वास्तविकता है। इत-ना पारंपारिक नैतिक आदर्श के बाहर रहते हुए काम-संबंधों का मुक्त आचरण आज की नवी-न नैतिक प्रणाली को मा-ो व्याख्यायित कर रहा है। इस नवी-न स्थितियों को अप-ने जीव-न में पुरुष की भाँति उसी सहायता से स्वीकार कर-ना चाहती है। हालाँकि यह स्थितियाँ अभी आम नही हुई है, कि-तु महत्वपूर्ण रुप से उल्लेख-नीय अवश्य हो गई है। विशेषकर स्त्री के इस स्वच्छंदतावादी रुप का चित्रण ममता कालिया ने अप-ने कथा साहित्य में किया है। नैतिकता के संबंध में डॉ. प्रमिका कपूर लिखती है- "नैतिकता के लिए जो दोहरा मापदण्ड था, उसके सम्ब-ध में शिक्षित स्त्रियों का दृष्टिकोण काफी बदल गया है। और अधिक से अधिक स्त्रियाँ दोहरे मापदण्ड को आपत्तिज-नक मा-न-ने लगी है। शादी से पहले सेक्स सम्ब-ध अथवा विवाहोत्तर सेक्स सम्ब-ध के कारण पुरुष कों भी उत-ना ही देय मा-न-ना चाहिए, जित-ना स्त्रियों को मा-ना जाता है। ऐसी माँग कर-ने वाली स्त्रियों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। शिक्षित नवयुवतियाँ तो पुरुष शादी से पूर्व या विवाहोत्तर सेक्स-संब-ध स्थापित कर सकता है, तो स्त्रियाँ भी ऐसा क्यों नहीं कर सकती?"[१] स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नारी की यौ-न-सम्ब-धी दृष्टि ने उसे व्यवहार के धरातल पर भी स्वच्छंद किया है। वह सामाजिक क्षेत्र में आ-ने से पुरुष के साथ सम्ब-ध स्थापित कर-ने में अधिक स्वतंत्र हुई है। उ-नके मस्तिष्क में नैतिकता सम्ब-धी धारणा बदली है। एक से प्रतिबध्द रहकर प्रेम कर-ना और उसी से जुड़कर रह-नेवाली धारणा आज खण्डित हुई है। इस संदर्भ में डॉ रमा नवले लिखती है- "स्त्री की काम वास-ना का संबंध पाप पुण्य से जोड़ा गया था। साठोत्तरी उप-यास में चित्रित नारी काम-वास-ना को सहा प्राकृतिक आकर्षण मा-नती है। पाप पुण्य से इसका संबंध उस-ने तोड़ दिया है।"[२] ममताजी की अधिकांश कहानियों की नायिका यौ-न सम्ब-धों के प्रति स्वच्छंद दृष्टि रखती हुई परिलक्षित होती है।

'अपत्नी' कहा-नी की नायिका सु-ंदा लीला के घर आती है। "लीला उठ चुकी थी और ब्लाऊज के बट-न लगा रही थी, जल्दी जल्दी में हुक अंदर नहीं जा रहे थे।"[३] बि-ना ब्याहे के बॉस के साथ सम्ब-ध रख-ने वाली लीला उ-मुक्त जीव-न जीती है। 'अपत्नी' कहा-नी की नायिका लीला बि-ना ब्याहे अप-ने बॉस के घर पत्नी जैसी रह-ने लगती है। जब भी बाहर जाती है, झूठा मंगलसूत्र पह-नकर बाहर जाती है। नारी के इस तरह के बर्ताव पर डॉ.राजाराम लिखते है- "आज के युग में विवाह नैतिकता के आरक्षण की अपेक्षा अनैतिकता को छिपा-ने के लिए आवरण ब-ना गया है। यह आडम्बर सामाजिक व्यवस्था का इत-ना महत्वपूर्ण अंग ब-ना गया है कि, उसके विरुध्द कुछ कह-ना आसा-न बात नही है। चाहे पुरुष हो चाहे नारी विवाह के उपरा-त भी व्यभिचार को ब-नाये रख-ने के लिए बीच में विवाह का आवरण अवश्य रख-ना चाहते हैं। प्रगतिशील

**शोधछात्रा, एन.ई.एस.सायन्स कॉलेज, नांदेड (महाराष्ट्र)*
***शोध-निर्देशिका एवं हिन्दी विभाग प्रमुख, एन.ई.एस.सायन्स कॉलेज, नांदेड (महाराष्ट्र)*

लेखकों में ऐसा विवाह, विवाह -हीं है, जिसमें एक अपरिचित तथा भिन्न प्रकृति युगल को पकड़कर यह कहा जाता है कि, लो विवाह के रुप में तुम्हें लाइसेंस मिल गया है और आज से प्रेम कर-ना शुरु कर दे।" (४)

'पिछले दि-न का अँधेरा' कहा-नी की -नायिका रुचि उ-मुक्त भोग की शिकार है, कपूर के लिए दफ तर से घर लौट-ने का अर्थ होता है, रुचि के पास लौट-ना रात के आठ बजे तक उसके साथ रहती है। फिर उसे वह घर छोड़-ने जाता आज "उ-हो-ने अँधेरा हो-ने पर पाया, वे साथ-साथ अँधेरे की प्रतीक्षा कर रहे थे, अँधेरे को चिरता हुआ एक भर्राया स्वर पहले धीमे, फिर लगतार उँचे -नीचे शुरु हुआ, उसके शुरु हो-ने के अचा-नकप-न से कपूर को धकेल सा दिया, उसे पता भी -नही चला कि, उस चेत-ना में रुचि के ओंठ उसके दांतो में भिच गए थे और वह छूट-ने का प्रयास कर रही थी।"(५) अप-ने दैहिक शोषण का बोध उसे आज ही हुआ है, इससे पहले कभी इत-ना नि-चोड़ -नही ड़ाला था।

'वे' अरुणा यात्रा में अप-ने आदर्श भाई की परवाह किये बगैर दोस्त के साथ यात्रा पर नि-कल पडती है। वैसे -"यात्रा के बाद -नींद बड़ी गहरी होती है, नि-श्चेष्ट वैसे -नींद -नसों को एक-एक कर ढीला करती जाती है। कमरे में -नींद थी, रजाई और कम्बल के -नीचे, सिर्फ रोश-नदा-न में कबूतर फड़फड़ा रहा था।"(६)

'साथ' कहा-नी की सु-न-दा पिता की छूट मिल-ने पर विवाहित बॉस अशोक के घर रह-ने लगती है। जब कभी सु-न-दा शादी के लिए कहती-च्वह वार्डरोब से नि-कल कर टाइयों का सेहरा सिर पर बाँध लेता और सु-नंदा पर सम्ब-धों का धारावाहिक सिलसिला शुरु कर देता।"(७) ऐसे समय में सु-नंदा रसोई की प-नाह लेती- वह जा-नती थी कि अशोक के ऑफिस से ही सही, पर मिस प्रधा-न का मेटर्नि-टी लीव पर जा-ना, एक विस्फोटक घट-ना होगी और वह मिस-प्रधा-न थी।"(८)

'अ-नुभव' ठंड की वजह से परेशा-न कहा-नी की औरत अ-नजा-न रामू के साथ सो-ने में संकोच -नही करती। "रात के गुप्प अँधेरे में, रजाई के अ-दर, उस वक्त रामू को कई-कई बातें पता चली कि लाख पाला पड़े जिस्म की एक किस्म रजाई से भी ज्यादा गर्मी देती है कि कामकाज की थका-न देह तोड़ती है, तो यह थका-न देह जोड़ती है, कि कल तक वह एकदम अ-नाड़ी और बेवकुफ लड़का था,आज इस वक्त से वह पूरा मर्द है। जल्दी ही वह गहरी -नींद सो गया।"(९) इस प्रकार ममताजी की -नायिका विवाहपूर्व अ-नैतिक सम्ब-धो के प्रति आकर्षित होती है।

'वसं-त -सिर्फ-एक तारीख' ममताजी कहानियों में -नारियाँ अप-ने भाव-नाओं के आधार पर स्वच्छं-द जीव-न व्यतीत कर-ना चाहती है, जिसे समाज की कोई ताकत रोक-ने का प्रयास -नही कर सकती। वह भाव-ना उसकी अप-नी विशुध्द वैयक्तिक वस्तु है, समाज के किसी वर्ग विशेष या मात्र पुरुष वर्ग की -नही, सामाजिक व्यवधा-नो के सीमित विधा-नो का अस्वीकार करके वह स्वच्छंद चेत-ना से परिचित हो-ना स्वीकार करती है। 'वसं-त -सिर्फ-एक तारीख' की -नायिका चंदा अप-ने पारिवारिक समस्याओं के बावजूद घर से बाहर नि-कलकर इस वास्तविक ागत का स्वच्छं-द रुप से अ-नुभव कर-ना चाहती है। वह कहती है- "मेरी संवेद-ना वस-त का आ-न-द ले रही थी। मेरी चेत-ना एक महत्वकांक्षी योज-ना ब-ना रही थी, जिस दि-न यह जा-नकारी मुझे मिली मेरे अल्हाद को कोई सीमा -न रही।"(१०) कहा जाता है, विवाह दो म-नो का म-नोमिल-न पवित्र बंध-न होता है, ऐसे में आवश्यकता होती है, जीव-न भर आप एक दूसरे के साथ इमा-नदारी से रहे, लेकि-न आधु-नि-क परिवेश में आर्थिक रुप से स्वावलंबी दम्पत्ति में -नौकरी के कारण एक दूसरे से दूर कई कई महि-नों तक अकेला रह-ना पड़ता है। ऐसे समय में विवाह जैसे पवित्र बंध-न को भूलाकर भाव-ना वेग में गलत राह पर आधु-नि-क -नारी चल ती दिखाई देती है। जिंदगी केवल भाव-नाओं के आधार पर ही -नही चलती, किसी ठोस सहारे की उसे अत्याधिक जरुरत होती है। ऐसे वक्त पर वह चाहे पुरुष ही या स्त्री अप-ने अकेलेप-न को दूर कर-ने के लिए अ-नैतिक संबंध रख-ने पर मजबूर हो जाती है। ऐसी ही -नारी का चित्रण लेखिका ममता कालिया -ने अप-नी कहा-नी संग्रह सीट -नम्बर छह कहा-नी 'लगभग प्रेमिका' की -नायिका के द्वारा कराती है। "मै चाहती थी एक सीधा-साधा संक्षिप्त सुरक्षित सा प्रेमप्रसंग।"(११) नि-स्सेह आज मा-नव पाश्चात्य सभ्यता की दौड़ में आगे जा रहा है। स्वच्छ-दता -ने बदलते परिवेश में -नारी को भी प्रेरित किया और वह भी अप-ने को बदल-ने को कृत संकल्पित हो उठी। कहानियॉ में अधिकांश -नायिका इस -नयेप-न को प्राप्त कर-ने के लिए प्रयत्-नशील दिखाई देती है।

संदर्भ :

(१) डॉ. प्रमिला कपूर : विवाह,सेक्स और प्रेम, पृ.क्र. ४०.

(२) डॉ. रमा -नवले : मृदुला गर्ग के कथा साहित्य में -नारी चरित्र, पृ.क्र. ६४.

(३) छूटकारा (कहा-नी संग्रह) : ममता कालिया, अपत्-नी, पृ.क्र.३९.

(४) डॉ. राजाराम : आधु-नि-क हिंदी उप-यास साहित्य में प्रगती चेत-ना, पृ.क्र. १९८

(५) पिछले दि-न का अँधेरा छूटकारा (कहा-नी संग्रह) : ममता कालिया, पृ. ६४.

(६) छूटकारा (कहा-नी संग्रह) : ममता कालिया, पृ.क्र.९२.

(७) छूटकारा (कहा-नी संग्रह) : ममता कालिया, साथ, पृ.क्र.७०.

(८) छूटकारा (कहा-नी संग्रह) : ममता कालिया, वही, पृ.क्र. ७३.

(९) जाँच अभी जारी है (कहा-नी संग्रह) अ-नुभव, पृ.क्र. ९५.

(१०) चर्चित कहानियाँ ममता कालिया, वस-त सिर्फ एक तारीख, पृ. २९.

❁❁

An International,
Registered & Referred
Monthly Journal :
Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 69-70
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

जनभाषा के कवि - हरिवंशराय बच्चन

प्रस्तुत शोधपत्र में हिन्दी के वरिष्ठ कविवर हरिवंश राय बच्चन की कविताओं का अध्ययन जनभाषा या उसके कला-पक्ष को लेकर किया गया है। हिन्दी कविता के इतिहास में छायावादोत्तर काल अति चर्चित है। इसका कारण यह है कि कवियों ने इस काल में काव्य की संवेदना जिन तत्वों से की है, उनमें से कविता की भाषा प्रमुख है। इस काल तक कवियों ने तत्सम और क्लिष्ट शब्दों को छोड़कर, वह भाषा दी, जो आम और बोलचाल की भाषा रही है। यही कारण है कि इस काल की गीत, रचनाएँ आज भी पाठकों की ज़ुबान पर है। भाषा की विशेषता के कारण जिन कवियों को पहचाना जाता है, उनमें बच्चनजी का नाम प्रमुख है। भाषा की इस रवानगी ने कविता को समाज से सीधा जोड़ा था, क्योंकि यह मंच से पढ़ी जाती थी।

डॉ.तीर्थराज राय

हिन्दी कविता के इतिहास में जिसे हम छायावादोत्तर काल के नाम से जानते हैं, उस काल की काव्य संवेदना जिन तत्वों से पहचानी जाती है, उनमें केन्द्रीय तत्व कविता की भाषा है। छाया वादोत्तर कवियों ने तत्समता और क्लिष्टता का दामन छोड़कर काव्य भाषा के उस धरातल पर उतर आये, जहाँ उनकी कविताएँ सामान्यजन के कण्ठ और स्मृति में जगह बनाने लगी। निश्चय ही इस दृष्टि से बच्चन अग्रणी थे। भाषा की यह रवानगी वैसे तो बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', भगवतीचरण वर्मा, नरेन्द्र शर्मा सभी में है, परन्तु सच्चे अर्थों में अपनी भाषा की रवानगी के कारण जनचेतना के कवि बच्चन ही बन सके। बच्चन ने न केवल कविता को नयी देहयष्टि दी, वरन् उसे नवीन वस्त्रों से अलंकृत भी किया। वे कविता को पूरी गरिमा के साथ नये सिरे से वाचिक परम्परा से जोड़ते हैं, जहाँ कविता समाज से सीधा और मंचीय संवाद करना सीख जाती है।

बच्चनजी का तत्कालीन जनमानस में इतने व्यापक और गहरे स्तरों पर उतरने का एक कारण उनका स्वयं माधुर्य भी था। उनके स्वर का माधुर्य इतना जादुई था कि लागे उनके गीतों को सुनकर झूम उठते थे। श्रोता के मन में वे गीत स्थायी भाव से अपनी जगह बना लेते थे, क्यों कि उसकी भाषा नितान्त उनकी अपनी भाषा होती थी और उनकी संवेदना उनके मन को गहराई से छूनेवाली होती थी। बच्चनजी जब गाते थे – ''तुम छू दो मेरे प्राण अमर हो जाँय/ तुम गा दो मेरे गान अमर हो जाँय।'' ('तुम गा दो' – बच्चन)

तो ये पक्तियाँ श्रोता के मन में सीधे उतर आती थीं। ''मिट्टी का तन/मस्ती का मन/क्षण भर जीवन/मेरा परिचय'' कुम्हार के घड़े को प्रतीक बनाकर जब बच्चन अपना परिचय इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, तो पाठक को आत्मसात् करने के लिए किसी भाषा संस्कार की जरूरत नही पड़ती। ये कविताएँ हिंदी साहित्य के विद्वतजन की परिधि को तोड़कर सहसा विशाल जन समुदाय को छूने वाली भाषा बन जाती है।

बच्चन की काव्य–भाषा का यह संस्कार बहुआयामी है। वह केवल कठिनता से सरलता की ओर बढ़नेवाला प्रवाहमात्र नहीं है। बच्चनजी जब अपनी काव्यभाषा की निर्मिति कर रहे थे, जिसमें तत्समता के बजाय सरलता पर बल था, तो एक खतरा यह भी था सरलता की ओर बढ़ने वाला यह रूपान्तरण कहीं अकाव्यात्मक और सतही न बन जाए। इस चुनौती को बच्चन जी ने स्वीकार की। जब वे कहते हैं – ''तीर पर कैसे रूकूँ मैं/आज लहरों में निमंत्रण'' (तीर पर कैसे रूकूँ – बच्चन)

तीर और लहर का द्वन्द्व और तीर से छलांग लगाकर लहरों में उतर आने का संकल्प नितांत काव्यात्मक संकल्प है। बच्चनजी जब मधुशाला के पदों में माधुर्य छलकाते हैं, तो पाठक उनके चुम्बकीय आकर्षण में बंधे बिना नहीं रह पाता।

''मेरी जिह्वा पर हो अंतिम वस्तु न गंगाजल हाला/ मेरे होठों पर हो अन्तिम वस्तु न तुलसीदल, प्याला/ दें वे मुझको कान्धा जिनके मग मग डगमग करते हों/ और जँलू उस ठौर जहाँ पर कभी रही हो मधुशाला।'' (मधुशाला, बच्चन, पृष्ठ 30)

बच्चनजी इन पदों को गाकर सुनाते थे, तो उनके स्वर का सम्भार इन पदों का भाब्द विन्यास और इसमे निहित संवेदना पाठक के मन को बर बस ही अपने मोहपाश में बांध लेते थी।

बच्चनजी की काव्य–भाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह पाठक के मन बहुत गहराई तक पहचानती है। डॉ. रामकमल राय ने अपने एक आलेख में लिखा है – ''बच्चन का काव्यसृजन कृत्रिमता से एकदम मुक्त था। काव्य–यात्रा के प्रारम्भिक चरण में उनकी कविताओं का संसार युवामन का अपना संसार था। क्रमशः जब वे उल्लास से विषाद की ओर बढते हैं, मिलन से एकाकी कर

सहायक प्राध्यापक, श्रीमती केशरबाई लाहोटी महाविद्यालय, अमरावती (महाराष्ट्र)

देने वाले विरह की ओर बढ़ते हैं, तो भी वे उतने ही आकृत्रिम होते हैं। और उनकी काव्य–भाषा उतनी ही पाठक के मन को छूने वाली होती है। 'मधुशाला', 'मधुकलश', 'एकांत संगीत' और फिर 'मिलन यामिनी' इन सभी संकलनों में बच्चन प्रणयानुभूति के कवि हैं, किन्तु इस प्रणयानुभूति को जिस भाषा में कवि ने वाणी दी है, उसकीं पहुँच काफी व्यापक है। बच्चन की कविताओं ने हिंदी में पहली बार कविता को एक व्यापक स्वीकृति के धरातल पर खड़ा किया।''

(हिंदी अनुशीलन, मार्च 2003)

बच्चनजी प्रणय, मिलन, विरह के अतिरिक्त समाज की व्यापक चेतना और युगीन संघर्ष की पहचान भी रख्ते हैं। उनकी चेतना के केन्द्र में वह राष्ट्र भी है, जो आज़ादी की लड़ाई में जूझ रहा था। और जिसके केन्द्रीय पुरूष महात्मा गांधी थे। 'खादी के फूल' शीर्षक से लिखी गयी उनकी कविताएँ, उनकी उसी सामाजिक चेतना सें सम्बन्धित हैं, जिसमें वे अपने राष्ट्र की आत्मा को पहचानने की कोशिश करते हैं। इस दौर की कविताएँ भी भाषा की दृष्टि से उतनी ही सरल और अकृत्रिम हैं।

बच्चनजी ने अपनी कविता के लिए एक नयी राह चुनी थी। उनके गीतों में छायावादी कवियों जैसा सांस्कृतिक पुनरूत्थान है, न आध्यात्मिकता। न ही चित्रात्मक भाषा और न ही अपनी निजी अनुभूतियों को छिपाने के लिए विशेष प्रयत्न। वस्तुतः उनके गीत इतने सहज सरल और अभिधाप्रधान हैं, जिन्हें आत्मसात् करने के लिए पाठक और स्त्रोता को कोई अतिरिक्त परिश्रम नही करना पड़ता। वे लिखते हैं :

जो बीत गई सो बात गयी/जीवन में एक सितारा था
माना वह बेहद प्यारा था,/वह डूब गया तो डूब गया
अम्बर के आनन को देखो/कितने इसके तारे टूटे
कितने इसके तारे छूटे/जो छूट गये फिर कहाँ मिले,
पर बोलो टूटे तारों पर/कब अम्बरं शोक मनाता है।

(जो बीत गयी – बच्चन)

इस गीत में बच्चन जी सहज और सीधे लहजे में अपने हृदय की भावनाओं कों प्रकट करते हैं। बच्चनजी के काव्य को जो लोकप्रियता प्राप्त हुई उसका मुख्य कारण यही था कि उन्होंने जिस भाषा का प्रयोग किया, वह अकृत्रिम और सहज है। इसमें ऋजुता का गुण सर्वोपरि है। इस में जन मन रंजन की पूर्ण क्षमता है। इसकी सादगी ही इसका आकर्षण है।

बच्चनजी की काव्यभाषा पर विचार करते हुए हमें इस बात पर भी गहराई से सोचना चाहिए कि उन्होंने हिंदी भाषी समाज को कविता के नज़दीक लाने का एक बड़ा और महत्वपूर्ण कार्य किया। उनसे पहले कविता मुख्यतः विश्वविद्यालयों में पढ़ने और पढ़ाई जानेवाली कविता थी, किन्तु बच्चनजी उसे विश्वविद्यालयों से बाहर फैले हिंदी भाषी समाज की कविता बना दिया। इस सन्दर्भ में डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी की यह उक्ति ठीक लगती है। ''बच्चन अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार कविता में बोलचाल का प्रयोग करते हैं। इस सन्दर्भ में यह लक्षित करना रोचक है कि कैसे घरेलू प्रकार का साधारण नाम 'बच्चन' आधुनिक हिंदी कविता का क्रमशः एक महत्वपूर्ण नाम बन गया। बच्चन का ध्यान उर्दू काव्य शैली पर भी था, जहाँ भाषा के बोले जाने वाले रूप का प्रयोग सर्वाधिक काम्य रहा है। जहाँ गज़ल लिखी नहीं कही जाती है। बोलचाल वे अपने नगर इलाहाबाद से सीखते हैं, तो उर्दू काव्य शैली के प्रभाव के लिए उसके सबसे बड़े कवि मीर के प्रति आभारी हैं। बच्चन अपने काव्य–विकास के क्रम में उत्तरोत्तर उर्दू की साफगोई की ओर झुकते गये। (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ 221)

बोलचाल की यह भाषा जब बच्चन की कविता में उनकी जीवनानुभूति को अभिव्यक्त करती है तो इस भाषा का अन्दाज एक अद्‌भुत काव्यात्मक स्वरूप ग्रहण कर लेता है। जैसे –

प्रिय शेष बहुत है बात अभी मत जाओ/
अधर पुटों में बन्द अभी तक थी अधरों की वाणी /
हाँ, ना, में मुखरित हो पायी किसी प्रणय कहानी /
सिर्फ भूमिका थी जो कुछ संकोच भरेपल बोले/
प्रिय शेष बहुत है बात अभी मत जाओ /
प्रिय शेष बहुत है रात अभी मत जाओ

(बच्चन रचनावली–भाग दो, – सं. अजित कुमार)

ऐसी पंक्तियाँ बोलचाल की शब्दावली को काव्यानुभूति की अत्यंन्त मार्मिक अभिव्यक्ति बना देती है। नरेशचन्द्र चतुर्वेदी ने उनकी भाषा शैली के सम्बन्ध में लिखा है – ''हिंदी अपने सहज स्वभाव और शुद्ध स्वरूप में ही कितनी सरल और भाव राशि को संभालने में कितनी सक्षम है, इसका उत्तर बच्चन जी के गीतों को सामने रखकर देखा जा सकता है।'' (साहित्य चिन्तन– नरेशचन्द्र चतुर्वेदी, पृष्ठ 50)

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि बच्चन जी की काव्यभाषा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसकी भाषा जड़ता, रूक्षता और कुरूपता सें मीलों दूर तथा सबके लिए ग्राह्य जनभाषा है। उनका शब्द चयन, प्रतीक विधान, बिम्ब योजना सब उनकी अपनी उपलब्धि है। रोमानियत से सराबोर बच्चनजी ने व्यक्ति को न ही सामाजिक सरोकारों से जोड़ा है और न ही आध्यात्मिक आदर्शो से। उन्होंने अपने अनुभवों के सूक्ष्म और स्पष्ट बिम्बों के आधार पर एक नये साहित्यक सौन्दर्य की सृष्टि की है। इस रूप में डॉ. हरिवंश राय बच्चनजी का गीतिकाव्य जन भाषा और अनुभूति की निष्छलता के कारण नयी गरिमा से युक्त है।

संदर्भ :

(1) हिंदी अनुशीलन (मार्च 2003) : सं. डॉ. रामकमल राय।

(2) *साहित्य चिंतन : नरेशचन्द्र चतुर्वेदी।*

(3) *हिंदी साहित्य और सवेदना का विकास : डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी।*

(4) *बच्चन का रचना संसार : सं. डॉ. तनुजा चौधरी।*

❁❁

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 71-72
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

मृदुला गर्ग की कहानियों में नारी जीवन के विविध पहलू : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र आधुनिक हिन्दी कथाकारों में चर्चित रही मृदुला गर्ग की कहानियों पर आधारित है। लेखिका लगभग 5 दशकों से हिन्दी के कथा-संसार में सक्रिय हैं। उनकी कहानियों में समाज की विविधता के साथ विशेषताएँ और विसंगतियां एक जगह मिलती हैं। उन्होंने मनुष्यों के सभी नैतिक, दैहिक, भौतिक एवं ऐहिक पक्षों का वर्णन किया है। उनकी कहानियों में सामाजिक एवं राजनैतिक सच मिलता है। इनकी कहानियों की विशेषता यह है कि नारी विमर्श के इस दौर में, लेखिका ने आधुनिक स्त्री जीवन की कड़वी सच्चाइयों को चित्रित किया है। कम ही लेखिकाएँ हैं, जिनकी कहानियाँ यथार्थ के साथ मार्मिकता लिए हुए होती हैं। इनकी कहानियाँ बंधे हुए सांचे में न होकर नारी लेखन के सांचे को तोड़ती है।

निशा सिंह रघुवंशी

'हरी बिन्दी' स्त्रीत्व चेतना की कहानी है। एक दिन आँख खुलने पर उसे अहसास होता है कि राजन तो रात में ही दिल्ली जा चुका है, तब उसे चेतना आती है कि वह आज का सारा दिन अपने अनुसार व्यतीत कर सकती है।

इस कहानी में लेखिका दर्शाना चाहती है कि स्त्री सदैव अपने परिवारजनों के अनुसार जीवन व्यतीत करती है, लेकिन उसके अंदर भी अपनी कई इच्छाएँ होती हैं, जिन्हें वह अपने पति व बच्चों के लिये न्यौछावर कर देती है, जिसे लेखिका ने कहानी के प्रारंभ में कुछ इस प्रकार व्यक्त किया है।

''आँख खुलते ही आदतन नज़र सबसे पहले कलाई पर बँधी घड़ी पर गई .... सिर्फ साढ़े छः बजे थे। उसने फौरन दुबारा कसकर आँखे बंद कर लीं और इन्तजार करने लगी कि अब पलंग चरमरायेगा और आवाज़ आएगी– उठना नहीं है क्या ?'' (''प्रतिनिधि कहानियाँ'', पृष्ठ 13.)

इस कहानी में लेखिका ने स्त्री के स्वछन्द मन की प्रतिकृति को व्यक्त किया है किस तरह वह अपने आप को अकेला पाकर स्वयं के लिये जीना चाहती है।

मृदुला गर्ग की अगली कहानी : 'साठ साल की औरत' सुरभि घोष नामक नामक स्त्री पर, आधारित है। इस कहानी में लेखिका ने 'लोकापवाद' को व्यक्त किया है। युवावस्था में स्त्री 'लोकापवाद' के कारण अपनी भावनाओं को छिपा लेती है।

''सुरभि घोष ने अपनी एक कहानी में लिखा था, क ''साठ की होने पर औरत निरापद हो जाती है। कुछ भी करे, लोकापवाद नहीं होता।'' (''प्रतिनिधि कहानियाँ'', पृष्ठ 18.)

इस कहानी में लेखिका ने ''लोकापवाद' नामक जीवन मूल्य के प्रति अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया है। किस तरह महिलाएँ लोकापवाद के कारण अपने मनोभावों को व्यक्त नहीं करती जिसके कारण कई बार उनके जीवन की समस्त खुशियों पर विराम लग जाता है।

''समागम'' नामक कहानी में स्त्री की महत्वाकाँक्षा को व्यक्त किया गया है। साथ ही अंध विश्वास एवं परोपकार की भावना को दर्शाया गया है समागम कहानी एक ऐसी युवती की कहानी है, जिसकी स्वयं की महत्वाकांक्षाएँ पूरी नहीं हो पाती है लेकिन उसकी पुत्री अपनी माँ की महत्वाकांक्षाओं को अनायास ही अपना लेती है तथा उन्हें पूर्ण करने की दृढ़प्रतिज्ञा लेती हैं जिन्हें पूर्ण करते समय असमय ही मृत्यु को गले लगा लेती है। जिसका सम्पूर्ण दोषारोपण उसकी माँ पर कर दिया जाता है। अमला के पिता द्वारा उसकी माँ से कहे गये ये शब्द इस तथ्य को स्पष्ट करते है।

''अजीब माँ हो तुम । बेटी की कोई फ्रिक्र नहीं हैं। सारी दुनिया की माएँ चाहती हैं उनकी बेटियों का विवाह हो, घर–बार हो, संतान हो। वे सुखी, सुहागन गृहस्थिन बनकर जिएँ। एक तुम हो, बेटी के माध्यम से अपनी महत्वकांक्षाएँ पूरी करना चाहती हो । ... .'' (कहानी ''समागम'', पृष्ठ 36.)

खुदी लीक से हटकर जीने के सपने देखे । पूरे नहीं हुए तो बेटी पर थोप दिए। अब भुगतो, रोओ, चीखो, तिल–तिल कर मरो बेटी की याद में।''

''समागम' की नायिका अपनी युवा बेटी की सन्देहास्पद मृत्यु से व्यग्र, शान्ति की तलाश में गंगा दर्शन के लिये हरिद्वार जाती है।

'वो दूसरी' कहानी में, तीसरी पीढ़ी की नायिका के माध्यम से पूर्व औरतों के तत्कालीन परिवेश का अनावरण किया गया है। कहानी की नायिका की दादी के स्थान पर लाई गई एक गरीब

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी भाषा विभाग), कॅरियर कॉलेज, भोपाल (मध्यप्रदेश)

लड़की जो अपनी कलात्मकता को रूढ़िवादी घर में अपनी कला को बचाए है तथा कालान्तर में वह अपने पति की पहली पत्नी की विरासत को सौंपने की छटपटाहट लिए दुनिया त्याग देती है। नायिका की पहली दादी और दूसरी दादी भयानक वर्जनाओं के माहौल में भी स्वयं की अस्मिता को बनाए रखने का हौंसला बनाए रखती है।

''बुआ तंज से बोली, ''पा जाते तो जला न डालते, जैसे और जलाई। .... ''तस्वीरें जला दी ?क्यों ''

''आइने में देख–देख जो अपनी छवि आप उकेरे, रंडी से कम क्या हुई,'' (पृष्ठ 55.)

''वह मैं ही थी''– की नायिका जिसका नाम उमा है जो आसन्नप्रसवा है। वह अपने पति के साथ एक औद्योगिक कस्बे में रह रही है। जिस घर में उमा रहती है उस घर में इससे पहले रहने वाली कर्मचारी की पत्नि की प्रसव के दौरान मृत्यु हो चुकी है। उस औरत की मृत्युकथा के आंतक के साए में वह उस घर में रह रही है। आखिरकार एक बरसाती रात में वह एक बच्ची को जन्म देती है। (पृष्ठ 60.)

आज भी गांवों और कस्बों में चिकित्सा के अभाव में जच्चा–बच्चा किस तरह दम तोड़ देते हैं। इस कहानी में अत्यन्त मार्मिक ढंग से दर्शाया गया है।

''कुछ नहीं बदला'' उस औरत ने कहा, ''इच्छाशक्ति मुझमें तुमसे कम नहीं थी। फर्क सिर्फ इतना था कि मेरा बच्चा पहले मरा, मैं बाद में और तुम पहले मरोगी, तुम्हारा बच्चा बाद में।'' (पृष्ठ 64)

कहानी 'इक्कीसवीं सदी का पेड़' पर्यावरण से जुड़ी कहानी है। इस कहानी में दर्शाया गया है कि पॉलीथिन और कूड़ा–करकट की मार से बरसों पुराना, हरा–भरा, चहचहाता दरख्त धराशायी हो जाता है। इस कहानी में पेड़ के माध्यम से अपने प्रियजन के बिछुड़ने की पीड़ा दर्शायी गई है।

''वह यह भी समझ रहा था कि खुद उसके पास ज्यादा वक्त नहीं है। प्लास्टिक ने उसकी जड़े कैद कर रखी है। हवा का हलका –सा झोंका उसे ढेर करने के लिए काफी है हवा है कहाँ है ? प्रदूषण ने उसे सोख लिया है पेड़ क्या करें ?...'' (पृष्ठ 74.)

मृदुला गर्ग की कहानियाँ मार्मिक तथा यथार्थ पर आधारित है उनकी कहानियों का प्रारंभ तथा अंत कहीं भी हो पाठक को पूरी कहानी पढ़े बगैर चैन नहीं मिलता। मृदुला गर्ग की कहानियाँ बने बनाए फार्मेट या ढर्रे पर आधारित नहीं है उनकी कहानियों में रोचकता, कौतुहल और दार्शनिक निष्कर्ष तक पहुंच सकने का सामर्थ्य है।

<u>संदर्भ</u> :

(1) मृदुला गर्ग : राजकमल पेपर बैक्स : उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण : हरी विन्दी (कहानी), पृ. 5.

***(2)** मृदुला गर्ग : राजकमल पेपर बैक्स : उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण : साठ साल की औरत (कहानी), पृ. 13.*

***(3)** मृदुला गर्ग : राजकमल पेपर बैक्स : उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण : वो दूसरी (कहानी), पृ. 40.*

***(4)** मृदुला गर्ग : राजकमल पेपर बैक्स : उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण : समागम (कहानी), पृ. 28.*

***(5)** मृदुला गर्ग : राजकमल पेपर बैक्स : उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण : इक्कीसवीं सदी का पेड (कहानी), पृ. 66.*

***(6)** मृदुला गर्ग : राजकमल पेपर बैक्स : उत्कृष्ट साहित्य के जनसुलभ संस्करण : वह मैं ही थी (कहानी), पृ. 54.*

❁❁

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Hindi Literature
Research Link - 121, Vol - XIII (2), April - 2014, Page No. 73-74
RNI No. MPHIN-2002-7041, ISSN No.- 0973-1628

मालवी लोकगीतों में नारी सौन्दर्य की अभिव्यक्ति : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में मालवी लोकगीतों का अध्ययन, नारी सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के संदर्भ में किया गया है। सौन्दर्य, नारी को प्रकृति की अनमोल देन है। सृष्टि के नियंता ने बड़े मनोयोग से इस मूर्ति को तराशा और संसार को सौंपा है। कला, साहित्य और संस्कृति में नारी का सौन्दर्य रचनाकारों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। प्राचीन काल से लेकर आज तक नारी के सौन्दर्य को केन्द्र में रखकर चित्रण किया जाता रहा है। लोकगीत, लोक-संस्कृति के संवाहक हैं। मालवी लोकगीतों में नारी के सौन्दर्य का मनोरम चित्रण मिलता है। इस सौन्दर्य को लोक-कवियों ने विभिनन प्रतीकों, बिम्बों आदि के माध्यम से व्यक्त किया है। जैसे हाथ के पोंचे को चम्पा की डाली, नाक को तोते की चोंच, दांत को अनार के बीज आदि से महिमा मंडित किया गया है। आभूषण इस सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं।

डॉ.श्रवण कुमार सोलंकी

सौन्दर्य नारी को प्रकृति का अनमोल वरदान है। वह सृष्टि नियंता द्वारा बड़े मनोयोग से तराशी सृष्टि की सबसे सुन्दरतम कृति है। नारी के सौन्दर्य के सम्बन्ध में प्राचीन से अर्वाचीन युग तक बहुत कुछ लिखा व कहा गया, किन्तु अवर्णनीय सौंदर्य वर्णन की अभिलाषा करता रहा है।

मालवी लोकगीतों में नारी के सौन्दर्य का मनोरम चित्रण हुआ है। सौन्दर्य को विविध प्रतीक द्वारा अभिव्यक्त करने का लोक कवियों द्वारा प्रयास किया गया है। प्रमुख प्रतीक निम्नवत् है –

पील्ली	–	बेलन
जांग	–	मन्दिर के खम्ब
कमर	–	पतली करेली, सींह की कमर
पेट	–	नागर बेल के पल्लव
ऊँगली (हाथ)	–	मूंगफली
पोंचा	–	चम्पा की डाली
बाँह	–	चम्पा की डाली
नाक	–	तोते की चोंच
दाँत	–	अनार के बीज
सिर	–	नारियल
नयन	–	मृगनयन, कटार, नीम्बू की फाँक
बदन	–	चन्द्रमा
चाल	–	हथिनी
बदन का रंग	–	केसर, स्वर्ण, कंवल

उपर्युक्त विभिन्न उपमाओं का प्रयोग नारी के सौन्दर्य को अभिव्यक्त करने हेतु लोकगीतों में मिलते हैं।

मालवी के हीड़ लोक काव्य में रानी के सौन्दर्य को निम्नवत् अभिव्यक्ति मिली है। उदाहरण हैं :

पण राणी की ने पील्ली वो भावज म्हारी बेलन बाकळी
भावज राणी की जांग हे.....रे..... आंवळा–सा ऐ.....हे बाल

पण राणी की जांग वो भावज जाणे दिवळा–सा खम्ब
भावज जिणकी जांग हे....रे.... दिवळा–सा ऐ.... हे खम्ब

पण राणी की ने कमर वो भावज म्हारी करेली पातळी
भावज राणी को पेट हे.... रे....नागर बेल को ऐ...हे पान

पण राणी के ने आँगळया भावज म्हारी मूंगरेफळी
भावज राणी को पोंचो हे....रे.....चम्पा की ऐ.....हे डाल (1)

अर्थात् हे भाभी–सा! रानी के पैरो की पील्ली बेलन के समान स्निग्ध हैं, तथा उसकी जांग देव मन्दिर के खम्बे के समान चिकनी व पुष्ट है, जिस पर आँवले के रंग की रोमावली आच्छादित है। उसकी कमर पतली करेली के समान तथा पेट नागर वेल के पल्लव के समान कोमल है। उसके हाथों की ऊँगली मूंगफली के समान तथा उसकी पोंची चम्पा की डाली की तरह अत्यन्त सुन्दर है।

स्थानीय उपमानों के माध्यम से सौन्दर्य वर्णन मालवी की मौलिकता व सम्पन्नता का प्रतीक है। परम्परागत साहित्यिक उपमानों को नजर अन्दाज कर, स्थानीय उपमानों का प्रयोग कर लोक कवियों ने गीतों को लोक ग्राह्य बना दिया हैं।

इसी तरह ग्यारस माता की लोकगाथा में मोहिनी के रूप वर्णन के माध्यम से नारी के सौन्दर्य को विविध उपमानों से निम्नवत् अभिव्यक्त किया गया है, जो हीड़ लोक काव्य में वर्णित सौन्दर्य वर्णन से समतुल्यता रखता है। उदाहरण है –

अतिथि विद्वान (हिन्दी विभाग), शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला-शाजापुर (मध्यप्रदेश)

जांग देवल का खम्ब करिया
पीली बेलण की बेल
आंगली मूंगफल्या बनी
अरे बइयाँ चम्पा री डाल
नाक सुआरी चोंच
दांत दाड़म का बीज बन्या
सीस नारेल की रंग.... (2)

अर्थात् मोहिनी की जांग देव मन्दिर के खम्बे के समान तथा पील्ली बेलन के समान स्निग्ध है, हाथों की ऊँगली मूंगफली की तरह तथा बाँहे चम्पा की डाली की भाँति सुन्दर है। उसकी नाक सुआ की चोंच की तरह मनोरम एवं दाँत अनार के दाने के समान सुन्दर है। उसका सिर नरियल के रंग की भाँति सुशोभित है।

देव मन्दिर से जांग की तुलना पवित्रता का प्रतीक है। बेलन के समान स्निग्ध पील्ली उसकी शारीरिक संरचना को और भी मनोरम बना देती है। हाथों की ऊँगली मूंगफली से पूर्ण समानता रखती है, जिसे चखने का लोभ हमेशा से प्रेमी को रहा है। नासिका की सुआ की चोंच से, दाँत की अनार के दाने से एवं बाँह की चम्पा की डाली से, परम्परागत उपमानों के आधार पर वर्णन किया गया है, जो अब बहुलता से साहित्य में दृष्टिगोचर होता है।

इसी तरह मालवी लोक कवियित्री 'सुन्दर' के गेय दोहों में सौन्दर्य के मनोरम प्रतीक परिलक्षित होते हैं। उदाहरण है –

चंद बदन मृगलोचणी, सिंध कटि गज मत्त।
सुन्दर, सज धज कामणी, वन हिरणी मद मत्त।। (3)

अर्थात् कामिनी का शरीर चन्द्रमा की धवलता की तरह सौम्य है, तथा उसके नयन, मृग के नयनों के समान अत्यन्त सुन्दर है। सिंह की कमर के समान उसकी पतली कमर है तथा हथिनी की तरह उसकी मदमस्त चाल है। वह सज धज के वन में विहार करने वाली हिरणी की तरह निकली है।

एक अन्य दोहे में नारी के चेहरे की तुलना कमल के पुष्प से की गई है, जिससे सुगंध निर्गत हो रही है, परिणामतः उसके आस–पास रस की आस में भंवरे भटक रहे हैं। उदाहरण है –

कँवला करणी कामणी, कंवलाँ उड़े सुवास।
सुंदर, भटके मधकरा, मद चाखण की आस।। (4)

इसी प्रकार प्रस्तुत दोहे में गोरी सरोवर में स्नान कर रही है। उसका सौम्य शरीर झिलमिला (चमक) रहा है। उसकी नाभि के पास स्थित काला तील लोगों को काम–पीड़ित कर रहा है। उदाहरण है–

सरवर न्हाई गोरड़ी, झलमल झलके डील।
सुंदर, कामण कइ करे, ठोड़ी कारो तील।। (5)

एक अन्य लोकगीत में नारी का सौन्दर्य उसके यौवन का दुश्मन बन गया है। उसका कोमल शरीर धूप में कुम्हला न जाए, इसलिए उसकी माँ जमाई के साथ भेजने से स्पष्ट मना कर देती है, किन्तु हठी जमाई उसे रास्ते भर नजर उतारते हुए ले जाना चाहता है। उदाहरण है –

जमाईजी हो राज म्हारा बाई घणी है रूपाली राज
म्हारी ने नी मेलां घर जाव
सासुजी हो राज बाटे बाट नजर उतारां राज
थारी ने ले जावांजी घर जाव (6)

अतः स्पष्ट है कि मालवी में सौन्दर्य वर्णन उत्कृष्ट एवं मौलिक है। परम्परागत उपमानों के साथ मौलिक उपमानों की उपलब्धता गीतों के सौन्दर्य में मणि–कांचन संयोग है। सौन्दर्य वर्णन संयमित रूप से किया गया है, जिसमें रीतिकालीन काव्य की तरह हास्यात्मकता नहीं प्रदर्शित हो सकी है। लोक कवयित्री सुन्दर के गेय दोहे साहित्यिक दृष्टि से उत्कृष्ट है, जो मनोरम बन पड़े हैं। ये दोहें बिहारी के दोहों से प्रतियोगिता करते दिखाई देते हैं।

अतः स्पष्ट है कि मालवी लोकगीतों में नारी के सौन्दर्य एवं वेश–भूषा का मनोरम चित्रण हुआ है। उसका सौन्दर्य अवर्णनीय है। विभिन्न स्थानीय प्रतीकों से अभिव्यक्त उसका सौन्दर्य अत्यन्त मनोरम बन पड़ा है। परम्परागत वेश–भूषा को लोकगीतों में अभिव्यक्ति मिली है। घाघरा, लुगड़ा, कंचुकी धारण कर वह घूँघट से घायल करने की क्षमता रखती है। अतः मालवी नारी सौन्दर्य से लबरेज पारम्परिक वेश–भूषा युक्त विविध आभूषणों से सुसज्जित अत्यन्त मनोरम लगती है।

संदर्भ :

(1) शोधार्थी रमाकांत चौरड़िया, ग्राम व पोस्ट देवला बिहार, जिला शाजापुर म.प्र. से सस्नेह प्राप्त।

(2) *डॉ. चिन्तामणि उपाध्याय : मालवी लोकगीत एक विवेचनात्मक अध्ययन, पृ. 253.*

(3) *डॉ. पूरन सहगल : तक तक करे सिकार, दोहा क्र. 191, पृ. 25.*

(4) *डॉ. पूरन सहगल : तक तक करे सिकार, दोहा क्र. 236, पृ. 28.*

(5) *वही, दोहा क्र. 290, पृ. 32.*

(6) *श्री टीकमचन्द भावसार 'बा', डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित : मालवी लोकगीत, पृ. 525.*

❁❁